मानव-जीवन का विधान

लेखक

सन्तराम बी० ए०

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

प्रथम बार] १९२३ [मूल्य ॥।)

श्रीमान् लाला रामदासजी गोहिल ।

जन्म	निधन
आश्विन १९०० वि०	१० पौष १९६३

समर्पण

परम पूजनीय पितृदेव—

श्रीमान् लाला रामदासजी गोहिल

के

चरण-कमलों में
प्रेम, भक्ति और श्रद्धापूर्वक
सादर और सविनय
समर्पित।

सन्तराम।

निवेदन।

यह पुस्तक The Economy of Human Life "दि इकानोमी ऑव ह्यूमन लाइफ़" नामक अँगरेज़ी पुस्तक का अनुवाद है। अँगरेज़ी पुस्तक एक चीनी ग्रन्थ का भाषान्तर है; और चीनी ग्रन्थ एक बहुत प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ का अनुवाद है। यह संस्कृत ग्रन्थ लासा नगर के किसी पुस्तकालय में मिला था। किस प्रकार मिला था और किसको मिला था यह आगे दी हुई चिट्ठियों के पाठ से ज्ञात हो जायगा। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि संस्कृत के इस दुर्लभ ग्रन्थ में जीवन की पूरी पूरी युक्ति दी गई है। इसकी एक एक बात लाख लाख रुपये की है। इसके प्रति दिन के पाठ से मनुष्य बहुत कुछ आत्म-सुधार कर सकता है और स्त्री-पुरुष, आबाल-वृद्ध सभी इसके स्वाध्याय से समान लाभ उठा सकते है।

मूल पुस्तक के विषय में कुछ अधिक न कह कर

हम इसके अँगरेज़ी अनुवाद के विषय में थोड़ा
कहना चाहते हैं। मूल संस्कृत पुस्तक हमें सम
अप्राप्य है। उसका चीनी भाषान्तर भी हमारे पा
नहीं, इसलिए हम नहीं कह सकते कि मूल
उसका अंगरेजी अनुवाद कितना भिन्न है। संस्कृ
पुस्तक किसी भारतीय ब्राह्मण की रचना मा
गई है। इसलिए उसके सभी विचार आर्य्य-धर्म
के अनुकूल होने चाहिए। पर अनुवाद में ह
मनुष्य और जीवात्मा के विषय में कुछ
ईसाई विचार देखकर आश्चर्य होता है, औ
यह मानना पड़ता है कि ईसाई अनुवादक अप
आपको अपने धार्मिक विचारों से अलग न
रख सका। आर्य्य-धर्म में जीवात्मा का ज
नहीं माना जाता। वह अनादि और अमर मा
जाती है। साथ ही अनादित्व और अमरत्व
दृष्टि से पशुओं और मनुष्यों की आत्माओं में
भेद नहीं समझा जाता। पर ईसाई और मुस
मान जीवात्मा को एक सृष्ट पदार्थ मानते ह

मनुष्य की आत्मा और पशु की आत्मा को एक चीज़ नहीं समझते। उनके धर्म-ग्रन्थों में मनुष्य को मिट्टी का पुतला और ईश्वर की प्रतिछाया कहा गया है। आर्य्य धर्म्म में सृष्टि को प्रवाह से अनादि माना जाता है। क्योंकि प्रकृति का अभाव किसी समय भी स्वीकार नहीं किया जाता। कारण प्रकृति का कार्य्य यह जगत् है। जगत का सर्वथा विनाश कभी नहीं होता। वह कार्य्य से कारण में लीन होजाता है। पर ईसाई और मुसलमानों में जगत् की उत्पत्ति इस प्रकार नहीं मानी जाती। वे कहते हैं कि परमेश्वर ने कहा "हो जा", और जगत शून्य से उत्पन्न हो गया!

अब ज़रा अँगरेज़ी अनुवाद के नीचे दिये वाक्यों पर ध्यान दीजिए :—

१. "तू अपने को इस धूलि से ऊँचा कर जिससे तू बना है"—पहला खण्ड, पहली पुस्तक चौथा प्रकरण।

२ "हे मिट्टी की सन्तान! यद्यपि वह (आत्मा)

तेरे बाद भी रहेगी, परन्तु यह मत समझ कि वह तुझसे पहले पैदा हुई थी; वह तेरे शरीर के साथ ही पैदा की गई थी।"—दूसरा खण्ड, पहली पुस्तक, तीसरा प्रकरण।

३. "जब ये (पशु) मर जाते है तब इनकी आत्मा मिट्टी में मिल जाती है, केवल तेरी आत्मा ही बची रहती है।"—खंड २, पु० १, प्र० ३।

४ "यह उसी की प्रतिच्छाया है जिसने यह दी है।"—खं० २, पु० १, प्र० ३।

५. "Who calleth forth worlds by the word of his mouth उसी की आज्ञा से लोकों का जन्म होता है।"—खं० १, पुस्तक ७, धर्म्म।

६. "बुद्धि का दान भगवान् के ख़ज़ाने है; उसने प्रत्येक को जितना जितना उसके लिए अच्छा मालूम हुआ, नियत किया है।"—खण्ड १, पु० ५; प्र० १।

ये विचार कभी भी एक आर्य-धर्म्मा-

सम्बन्धी ब्राह्मण के नहीं हो सकते। इनमें ईसाई धर्म की गन्ध स्पष्ट है।

इस पुस्तक के उर्दू अनुवाद के लिए पञ्जाब सरकार ने अनुवादक महाशय को २००) रुपये का इनाम दिया था। हमने भी उस अनुवाद से सहायता ली है। इसलिए हम अनुवादक महाशय के कृतज्ञ हैं। उर्दू अनुवाद अच्छा होते हुए भी सर्वाङ्गपूर्ण नहीं। इसमें कुछ त्रुटियाँ रह गई हैं।

इसकी पहली त्रुटि यह है कि इसमें अनेक वाक्यों का अनुवाद ही नहीं दिया गया। देखिए (क) दूसरे खण्ड की तीसरी पुस्तक, के चौथे प्रकरण में इन शब्दों का अनुवाद नहीं मिलता—When thou hast taught thyself to bear seeming good of men without repining, thou wilt hear of their real happiness with pleasure. (जब तू व्यथित हुए बिना दूसरों के

मङ्गलाभास को सहारना सीख जायगा तो तू उनके प्रकृत आनन्द को बड़ी प्रसन्नता से सुनेगा)। फिर (ख) दूसरे खण्ड की चौथी पुस्तक के पहले प्रकरण में ये शब्द छूट गये हैं:—"क्या वह उनसे नहीं कहता है—"वे पुरुष ऐसे ही थे जिनकी सन्तान होने का तुम अभिमान करते हो।" "विज्ञप्ति" का मज़मून सारा का सारा छोड़ दिया गया है। (ग) इनके अतिरिक्त जब हम डग्लस एम० गोन साहब को इस पुस्तक के नवीन सस्करण मे पहले संस्करण का छूटा हुआ एक वाक्य देकर प्रसन्न होते देखते हैं (खण्ड १, पु० १, प्र० २) तो उपर्युक्त मज़मूनों का छोड़ दिया जाना बहुत खटकता है।

उर्दू अनुवाद की दूसरी त्रुटि यह है कि इसमें अनेक वाक्यों का अशुद्ध अर्थ किया गया है। उदाहरणार्थ (क) He exerciseth his mind with contemplation and his body with action, and preserveth the health of both. (खण्ड १, पुस्तक १,

प्रकरण २) का अनुवाद इस प्रकार किया गया है— "वह कोई मनसूबा सोचता है और फिर झट उस पर अमल करता है। अक्ल और जिस्म दोनों की सेहत व तवानाई क़ायम रखता है।" परन्तु हमारे ख़याल में इसका अनुवाद यदि इस तरह होता तो अच्छा था—"वह चिन्तन से मन का और क्रिया से शरीर का व्यायाम करता है, और दोनों को तन्दुरुस्त बनाये रखता है।" फिर (ख) Communicate it to the wise for thine own improvement. (खण्ड १, पुस्तक ४, प्रकरण १) का अर्थ यह किया है— "दाना को भी कुछ सिखा जिससे उनकी तरक्क़ी हो"।

परन्तु इसका अर्थ इस प्रकार चाहिए— "अपनी उन्नति के लिए इस (ज्ञान) को बुद्धिमानों तक पहुँचा।" (ग) इनके अतिरिक्त piety (खं० १, पु० ४, प्र० २) का अर्थ उस प्रकरण में "ख़ुदा तरसी" नहीं लगता प्रत्युत वहाँ filial

piety अर्थात् "पितृ-भक्ति" से तात्पर्य मालूम होता है।

हमारे ऊपर के कथन से पाठक यह न समझें कि हमारा यह अनुवाद सर्वाङ्ग-सुन्दर और सब दोषों से रहित है। इसमे भी अनेक त्रुटियाँ रह गई हैं ऐसा हमें पूर्ण निश्चय है। पर ये त्रुटियाँ ऐसी है जिनके दूर करने में हम असमर्थ थे, इसलिए आशा है पाठक हमे क्षमा करेंगे। इस पुस्तक के पाठ और इसके उपदेशानुसार कर्म्म करने से यदि पाठकों के सुख की मात्रा में कुछ भी वृद्धि हुई तो हम अपने परिश्रम को सफल समझेंगे।

पुरानी बसी—होशियारपुर।
१ वैशाख १९७५ वि०

सन्तराम बी० ए०

भूमिका

यह आश्चर्य का विषय है कि जो पुस्तक ईसा की अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम अर्ध भाग में इतनी लोकप्रिय रह चुकी हो उसे अब लोग बिल्कुल भूल जायँ। "मानव-जीवन का विधान" का मूल हस्तलेख ल्हासा नगर में मिला था। किसी अज्ञात मनुष्य ने इसका अनुवाद करके इसे अर्ल आव चेस्टरफील्ड की भेंट किया था। इँगलैंड में यह पहले पहल सन् १७५१ ईसवी में प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक के उत्पत्तिस्थान के विषय में कुछ मालूम नहीं। जो कुछ मालूम हुआ भी है वह उन चिट्ठियों में मौजूद है जो अनुवादक ने अपने प्रतिपत्र आश्रयदाता को लिखी थीं और जो प्रस्तावना के रूप में अब इसी पुस्तक के साथ जोड़ दी गई हैं।

यद्यपि इसके इतिहास का कुछ पता नहीं पर इसके गुण स्पष्ट हैं। जब यह पहले पहल प्रकाशित

हुई तब यह बहुत शीघ्रता से हाथों हाथ बिक गई। एक ही वर्ष में इसके कई संस्करण हो गये। यहाँ तक कि सन् १८१२ ईसवी तक इसका पचासवाँ संस्करण छप गया। इसके बाद लोगों ने इसकी बात न पूछी। जर्मन, फ्रांसीसी, इटालियन, और वेल्श भाषा में इसका अनुवाद हो चुका है। कवियों ने इसका पद्यानुवाद कर दिया है। प्रसिद्ध चित्रकारों और शिल्पियों ने इसके विषयों को चित्रों और आलेख्यों द्वारा प्रकट किया है। जो पुस्तक इतनी प्रसिद्ध और लोकप्रिय रह चुकी हो वह अमर रहने की अधिकारिणी है। अतएव वह नया संस्करण इस आशा पर तैयार किया गया है कि जनता की दिलचस्पी इसमें बराबर बनी रहे।

इस पुस्तक का सबसे बड़ा गुण यह है कि इसमें सारे विषय का प्रतिपादन आद्योपान्त बड़ी ही उत्तम रीति से किया गया है। इसकी शैली बड़ी सरल, शुद्ध, संक्षिप्त और प्रभावशालिनी है।

इसके बताये हुए जीवन-सम्बन्धी नियमों में बड़े ही संयम से काम लिया गया है। नीति की अन्य पुस्तकों में प्रायः यह बात देखी जाती है कि लेखक अपनी परिस्थितियों और अपने समय की आवश्यकताओं पर दृष्टि रख कर लिखते हैं, पर यह बात इस पुस्तक में बिल्कुल नहीं पाई जाती। इसके लेखक की दृष्टि बड़ी विस्तृत है। वह सब युगों को एक समान देखती है। लेखक ने अपने समय के विषय में रत्ती भर भी पक्षपात से काम नहीं लिया, और व्यक्तिगत बातों को लेशमात्र भी बीच में घुसने नहीं दिया। उसने किसी विशेष जन-समुदाय या देश की परिस्थिति पर ध्यान नहीं दिया। इसी से उसकी यह पुस्तक प्रत्येक युग और प्रत्येक जाति के लिए पथ-प्रदर्शक का काम दे सकती है। यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है।

यह कहना ठीक न होगा कि इस पुस्तक में जीवन-सम्बन्धी सभी विषयों पर पूरी पूरी व्यवस्था मौजूद है; क्योंकि ऐसी समस्याओं पर

विचार करने के लिए मनुष्योत्तर बुद्धि का प्रयोजन है। फिर भी इसमें एक व्यापक युक्ति विधान के गुण है। सुलेमान के न्यायों में कोई क्रम और क़रीना नहीं पाया जाता, परन्तु मानव-जीवन का विधान इन दोषों से रहित है। लेखक ने अपने विचार-पुष्पों को बड़ी बुद्धिमत्ता के साथ एक सूत्र में पिरोकर एक अपूर्व-विचार-माला तैयार कर दी है। यद्यपि यह कई भागो में विभक्त है पर विचार का क्रम सब मे अटूट रूप से मौजूद है। यह मनरूपी समुद्र से निकले हुए मोतियों की एक सुन्दर माला है। इसका कोई कोई मोती तो बहुत ही उज्ज्वल और बढ़िया है। ये मोती अपने जुदा जुदा वास्तविक मूल्य के कारण ही नहीं प्रत्युत अपनी सापेक्ष पूर्णता के लिए भी हमारी प्रशंसा के पात्र है। अपने विशेष गुणो के कारण वे चिन्तारूपी जड़ाऊ पच्चीकारी के टुकड़े जान पड़ते है।

इस युग मे, जब कि संसार दुष्ट उपयोगवाद तरफ़ इतना झुक रहा है, अर्थात् जब कि लो ग

प्रत्येक बात में अपना फ़ायदा ही ढूँढ़ते हैं, हमें इसके जैसी पुस्तकों की बहुत आवश्यकता है। क्योंकि ये हमें बताती हैं कि जीवन में सत्य और हितकर बातें कौन सी हैं और किन बातों से आरोग्य बढ़ता है। आधुनिक युग की जटिलता ने प्रकृति की सीधी-सादी सचाइयों को हम से छिपा लिया है। इसका मुख्य कारण हमें यही मालूम हुआ है कि जितना कोई विषय सरल होता है लोग उस पर उतना ही कम ध्यान देते हैं।

यह पुस्तक ऐसे समय में लिखी गई थी जब कि ज्ञान का अनुसन्धान और धर्म्म-शीलता की वृद्धि दो भिन्न भिन्न चीज़ें न समझी जाती थीं; जब कि विज्ञान का प्रत्येक बात में अपना हित ढूँढनेवाला मत नीति के अधीन था, और जब कि प्रकृति का अध्ययन इसलिए किया जाता था कि उसके स्रष्टा का ज्ञान प्राप्त हो, और अध्ययन करनेवाले विद्यार्थी को इस बात का अनुभव हो जाय कि स्रष्टा की सृष्टि में मुझे कौन सा काम करना है। श्रम-विभाग में

जो आचार-चीणता पैदा हो गई है, और प्रत्येक व्यवसाय के लोगों मे जो अपनी एक अलग स्मृति बढने की प्रवृत्ति है उससे "मानव-जीवन का विधान" ऐसी पुस्तकें सार्वजनिक उपयोग की अपेक्षा निज स्वाध्याय के लिए अधिक लाभदायक बन गई है। अर्थात् लोग जाति रूप से चाहे इससे लाभान्वित न हों पर एक एक व्यक्ति इनसे अपने लिए सन्मार्ग का उपदेश अवश्य प्राप्त कर सकता है। प्राचीन लोगों ने अपने कर्म्म से इस बात का अनुमोदन किया है कि युद्ध युद्ध ही है। इसमें किसी पर दया नहीं हो सकती। जो बलवान् हो वह जीत जाय और जो निर्बल हो वह कूए में गिरे। जिसकी लाठी उसी की भैंस। पर आधुनिक लोग अपने व्यवहार मे यह कह रहे है कि व्यापार व्यापार ही है। इसमें सच-झूठ, और पुण्य-पाप, का कुछ भी विचार नहीं होना चाहिए। रुपया जमा करो चाहे किसी तरह करो। इन दोनों सिद्धान्तों में उन पवित्र भावों को कोई भी स्थान नहीं दिया गया जो एक सामान्य

आचार-आदर्श से पैदा होते हैं। पुराने लोग लड़ाई-भिडाई में पाशविक शक्ति का प्रयोग करते समय दया बिलकुल नहीं दिखाते थे; इसी तरह वर्तमान युग के लोग व्यापारादि में मानसिक शक्ति का उपयोग करते समय सर्वथा निष्ठुर हो जाते है। इससे स्पष्ट है कि मनुष्य की प्रवृत्ति में परिवर्तन नहीं हुआ, केवल उसका रण-क्षेत्र बदल गया है।

इसलिए हम यह आशा नहीं कर सकते कि इस पुस्तक के उपदेश, यद्यपि ये बड़े उच्च और गम्भीर हैं, सार्वजनिक जीवन की कठिनाइयों को घटा सकेंगे। ईसाई आचार-शास्त्र भी इस काम को नहीं कर सका। लेकिन हम यह आशा कर सकते है कि जिस प्रकार खीष्ट की शिक्षा ईसाई जगत् में व्यक्तियों को सदा सान्त्वना प्रदान करती आई हैं उसी प्रकार यह "मानव-जीवन का विधान"-रूपी विचारों का प्राचीन भाण्डार उन लोगों को उत्साह और बल-प्रदान करेगा जो व्यक्तिगत शुद्धि और संस्कृति से उस अधोगति को रोकने का यत्न करते

है जिसमें पड़ने का मनुष्यों को सदा डर बना रहता है।

यह संस्करण पहले संस्करण के साथ भली भाँति मिलान करके तैयार किया गया है, और अनुवाद के मूल-पाठ में केवल उतना ही हेर फेर किया गया है जितना कि बाद के संस्करणों में शैली को सरल रखने के लिए, जिस पर कि अनुवादक ने ध्यान देने का यत्न किया है, ठीक अनुकूल है।

रिचमण्ड हिल,
आक्टोबर, १९०१ ई०

डग्लस एम० गोन।

विषय-सूची

पहला खण्ड

पहली पुस्तक।

दूसरी पुस्तक ।

तीसरी पुस्तक ।

चौथी पुस्तक ।

पाँचवीं पुस्तक ।

छठी पुस्तक ।

सातवीं पुस्तक।

दूसरा खण्ड।

पहली पुस्तक।

दूसरी पुस्तक।

तीसरी पुस्तक।

चौथी पुस्तक ।

पाँचवीं पुस्तक ।

मानव-जीवन का विधान ।

(पहला खण्ड)

विज्ञप्ति ।

पूर्वीय शिक्षा की इस प्राचीन पुस्तक मे चरित्र-शुद्धि और नीति का जो भाव भरा पड़ा है, इसके शब्दों मे जो बल और संक्षेप पाया जाता है, इससे मनुष्यों का उपकार होने की जो आशा हो सकती है इन सब बातों ने उस व्यक्ति को, कि केवल जिसके विशेष मनोरञ्जन के लिए यह अनुवादित हुई थी और जिसके पास यह भेजी गई थी, जनता मे इसका प्रकाश करने की प्रेरणा की है। कई ऐसे कारण है जिनसे इस समय उसका अपना नाम तथा उसके संवाददाता का नाम प्रकट करना उचित नहीं मालूम होता। यह संवाददाता कई वर्षों से चीन देश में गया हुआ है और एक ऐसे काम मे लगा हुआ है जोकि साहित्य-सम्बन्धी सौगातों के इकट्ठा करने से सर्वथा भिन्न है। ये कारण चिरकाल तक न बने रहेंगे; क्योंकि इंगलेंड में वापस आकर उसका विचार

काश्रोत्सोऊ के सारे भ्रमण-वृत्तान्त का पूरा पूरा अनुवाद छपा देने का है, इसलिए पूर्ण सम्भावना है कि उस समय जनता को पुस्तक-सम्बन्धी सभी प्रकार के प्रश्नों का उत्तर पाने का मौक़ा मिल जायगा।

श्रीमान् अर्ल ऑव् चेस्टरफील्ड महोदय की सेवा में

पेकिन,

१२ मई, सन् १७४९ ई०

महामान्य,

पिछला पत्र मैंने २३ दिसम्बर सन् १७४८ ईसवी को आपकी सेवा में लिखा था। उसमें, मेरा ख़याल है, मैंने इस विशाल साम्राज्य की सभी भौगोलिक और नैसर्गिक बातों का उल्लेख किया था। इस पत्र में और इसके बाद के पत्रों में इस देश के लोगों के रीति-रिवाज, धर्म्म, शासन-पद्धति, और राजनियमों का विस्तारपूर्वक वर्णन करने का मेरा निश्चय था; लेकिन हाल ही में एक अद्भुत घटना हो गई है। इस देश का शिक्षित समाज आज-कल इसी की चर्चा मे मग्न है। शायद इसके बाद योरप में भी यह विद्वानों के अनुध्यान का विषय बन जाय। इसमें श्रीमानों को विनोद की कुछ सामग्री प्राप्त होगी यही जानकर मैं यथा-

शक्ति इसका स्पष्ट और सविस्तर वर्णन करने लगा हूँ।

चीन की पश्चिमीय सीमा से मिलता हुआ तिब्बत का बड़ा देश है। कई लोग इसे बारन्तोला भी कहते है। इस देश के लासा नामक एक प्रान्त में इन मूर्तिपूजक लोगों का महालामा अर्थात् प्रधान पुरोहित रहता है। आस पास की बहुत सी जातियाँ उसे देवता समझकर पूजती हैं। सर्व-साधारण में उसके पवित्र आचार के प्रति बड़ी ही श्रद्धा और भक्ति है। इसी से असंख्य धार्मिक मनुष्य उसकी पूजा के लिए लासा को जाते हैं, और उसका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए उसे चढ़ावे चढ़ाते हैं। वह एक बड़े ही शानदार पगोडा अर्थात् मन्दिर में रहता है। यह मन्दिर पौताला नामक पर्वत के शिखर पर है। इस पर्वत की तराई में बल्कि सारे लासा प्रान्त में सहस्रों लामा रहते है। इनके पद और सम्प्रदाय अलग अलग हैं। इनमें से अनेक लामा

बड़े शानदार पगोडों में रहते हैं। वहाँ इनकी एक प्रकार की गौण पूजा होती है। इटली की तरह सारा तिब्बत भी पुरोहितों से भरा पड़ा है। उनकी एक-मात्र गुज़र इन प्रचुर परिमित बहुमूल्य उपहारों और चढ़ावों पर है जो कि तुरकिस्तान, भारतवर्ष, और पूर्वीय देशों के सभी स्थानों से उनके पास पहुँचते हैं। सर्व-साधारण को दर्शन देते समय महात्मा एक शानदार वेदी पर चढ़ कर एक सुन्दर गद्दी पर पल्थी मार कर बैठ जाता है। उसके भक्त उसके सामने आकर बड़े ही विनीत और नम्रभाव से उसे साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं। परन्तु वह उनके प्रति सम्मान का कुछ भी चिह्न प्रकट नहीं करता। वह उनसे कभी बात भी नहीं करता, चाहे वे बड़े बड़े राजा ही क्यों न हों। वह उनके सिरों पर केवल हाथ फेर देता है। बस, इतने से ही वे समझ लेते हैं कि हमारे सभी पाप क्षमा हो गये। लोगों का उसके विषय में यहाँ तक ख़याल है कि उससे संसार की कोई चीज छिपी नहीं, वह

उनके हृदय की गुप्त बातों को भी जानता है। उसके विशेष शिष्य कोई दो सौ प्रधान प्रधान लामा है। लोगों को ये शिष्य निश्चय कराते रहते हैं कि हमारे गुरु अविनाशी है; वे मरते नहीं, केवल अपना चोला बदल कर किसी दूसरे स्थान में प्रकट हो जाते है।

चीन के विद्वानों का मुद्दत से यह ख़याल है कि इस बडे मन्दिर के पुस्तकालय मे अनेक अत्यन्त प्राचीन पुस्तकें छिपी पड़ी है। चीन के वर्तमान सम्राट् को प्राचीन पुस्तकों की खोज कराने का बड़ा शौक़ है। इसलिए जब उनको विद्वानों के इस ख़याल के सम्भव होने का पूरा पूरा विश्वास हो गया तो उन्होंने इन पुस्तकों को खोजने का दृढ निश्चय कर लिया। इस उद्देश की पूर्ति के लिए उन्हें सबसे पहले एक ऐसा विद्वान् ढूँढना पड़ा जो प्राचीन भाषाओं और लिपियों में भलीभांति निपुण हो। ढूँढते ढूँढ़ते उन्हे ऐसा परम विद्वान् मिल भी गया। उसका नाम काओ त्सीऊ था। इस

की आयु कोई पचास वर्ष की थी। उसकी आकृति बड़ी गम्भीर और श्रेष्ठ थी। साथ ही वह बड़ा वागीश था। पीकिन में चिरकाल से एक विद्वान् लामा रहता था। उसके साथ इसकी आकस्मिक मित्रता हो गई थी। इससे उसने तिब्बती लामाओं की भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया था।

इतनी योग्यताओं से सम्पन्न यह विद्वान् इस काम के लिए भेजा गया। उसके कार्य को अधिक महत्त्व देने के उद्देश से सम्राट् ने उसे कोलोआ अर्थात् प्रधान मन्त्री की उपाधि प्रदान की। साथ ही उसे उज्ज्वल उपकरण और सेवक दिये। महालामा और अन्य प्रधान प्रधान लामाओं के लिए बहु-मूल्य उपहार दिये। और अपने हाथ से महालामा के नाम यह पत्र लिख कर दिया.—

परमेश्वर के प्रतिनिधि; महामान्य, परम पूज्य, परम पवित्र !

"हम, चीन के सम्राट्, जोकि भूमण्डल के चक्रवर्ती राजा हैं, अपने अत्यन्त माननीय महामन्त्री

काओ त्साओ के द्वारा बड़ी पूजा और नम्रता के भाव से आपके पवित्र चरणों में साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं, और अपने लिए, अपने मित्रों के लिए, और अपनी प्रजा के लिए आपका आशीर्वाद चाहते है।

पुरातन काल के ग्रन्थों को ढूँढ़ने और भूतकाल के पाण्डित्य की प्राप्ति की हमें प्रबल कामना है। हमने सुना है कि आपके अतिप्राचीन और भक्तिभाजन आचार्य-सम्प्रदाय के पवित्र पुस्तकागारो मे कुछ ऐसे अमूल्य ग्रन्थ-रत्न है जो अपनी प्राचीनता के कारण अब सर्व-साधारण की, बल्कि बड़े बड़े विद्वानों की भी समझ मे नहीं आते। हम चाहते है कि, जहाँ तक हम से बन पड़े, उन ग्रन्थ-रत्नों को नष्ट होने से बचाने का यत्न करें। इसलिए हमने यह उचित समझा है कि अपने परम विद्वान् और माननीय महामन्त्री काओ त्सोऊ को अपना राजदूत बनाकर आपके पवित्र चरणारविन्द में भेजें। हमारी केवल यही कामना है कि हमारे इस माननीय दूत को पूर्वोक्त ग्रन्थों को

देखने और पढ़ने की आज्ञा दी जाय। हमें अपने दूत की प्राचीन भाषाओं में असाधारण योग्यता पर पूर्ण विश्वास है। वह पुरानी से पुरानी और अस्पष्ट से अस्पष्ट पुस्तकों को भी समझ सकेगा। हमने काओ त्सोऊ को आज्ञा दी है कि वह हमारे इन प्रमाण-पत्रों सहित, जिनके द्वारा हमें विश्वास है, वह हमारा मनोवाञ्छित प्रवेशाधिकार प्राप्त कर सकेगा, आपके पवित्र चरणों का चुम्बन करे।"

काओ त्सोऊ ने अपनी यात्रा का एक लम्बा-चौड़ा वृत्तान्त प्रकाशित किया है। इसमें उसने बहुत सी आश्चर्यजनक बातें लिखी हैं। सम्भव है, इँगलैंड में वापस आकर मैं उन सबका अनुवाद करके उन्हें छपा दूँ, पर इस समय मैं उसकी यात्रा का वृत्तान्त लिखकर श्रीमानों का समय नष्ट नहीं करना चाहता। इस समय इतना लिखना ही पर्याप्त होगा कि जब वह तिब्बत के पवित्र प्रदेश में पहुँचा तब बहुमूल्य उपहारों के कारण महालामा ने उसका अच्छा सत्कार किया।

उसके रहने के लिए पवित्र विहार में स्थान दिया गया और खोज के काम में उसे सहायता देने के लिए एक बहुत बड़ा विद्वान् लामा नियत हुआ। वह वहाँ कोई छः महीने रहा। इस काल में उसने वहाँ अनेक बहुमूल्य प्राचीन ग्रन्थ देखे। कई हस्त-लेखों मे से उसने बड़ी बड़ी विचित्र बातें नक़ल कीं, और उनके लेखकों और उनके रचना-कालो के विषय में ऐसे ऐसे सम्भाव्य अनुमान किये जिनसे उसकी सूक्ष्मबुद्धि, महान् निर्णय-शक्ति, और बहुश्रुतता का परिचय मिलता है।

लेकिन सबसे पुराना हस्तलेख जो वहाँ उसके हाथ लगा, और जिसे कोई भी लामा कई शताब्दियों से पढ़ और समझ न सकता था, वह प्राचीन ब्राह्मणों की भाषा और लिपि में लिखी हुई नीति की एक छोटी सी पुस्तिका है। वह पुस्तिका किसने लिखी और कब लिखी इसका निश्चय काओ र्सोऊ नहीं कर सका। परन्तु इस सारी पुस्तिका का उसने चीनी भाषा में अनुवाद

किया है। वह इस बात को अङ्गीकार करता है कि मूल पुस्तक की गम्भीरता और बल वह अपने अनुवाद में नहीं ला सका। इस पुस्तिका के विषय में यहाँ के बोनज़ियों और विद्वानों का आपस में बहुत मतभेद है। जो लोग इसे सबसे जियादा पसन्द करते है वे इसे अपने एक बडे तत्त्वज्ञानी, कनफ्यूशस, की रचना बताते हैं। इसके संस्कृत भाषा में होने का कारण वे यह बताते है कि कनफ्यूशस कृत मूल पुस्तक तो खो गई है और यह उसका अनुवाद-मात्र है। कई लोग इसे लाओ कियन नामक एक दूसरे तत्त्वज्ञानी की रचना समझते हैं। लाओ कियन कनफ्यूशस का समकालीन और टाओसी नामक सम्प्रदाय का प्रवर्तक था। पर इन्हें भी पुस्तक की भाषा के विषय में उसी कठिनाई का सामना करना पड़ता है जिसका कि इसे कनफ्यूशस की रचना बतानेवालों को करना पडता है। कई चीनी विद्वान् ऐसे भी है जो पुस्तक की आन्तरिक साक्षी पर इसे दन्दमिस (Danda-

mis, धनमणि) नामक ब्राह्मण की रचना कहते हैं। यह वही ब्राह्मण है जिसकी महान् अलचेन्द्र के नाम लिखी हुई चिट्ठी का उल्लेख योरपीय इतिहास-लेखकों ने किया है। काश्रो त्सोऊ ख़ुद भी इन्हों के साथ बहुत कुछ सहमत मालूम होता है, कम से कम वह इसे किसी प्राचीन ब्राह्मण की ही रचना समझता है। पुस्तक की शैली और भाव से काश्रो त्सोऊ इसे किसी पुस्तक का अनुवाद नहीं मानता। परन्तु एक बात से चीनी विद्वानों के मन में बहुत कुछ सन्देह उत्पन्न हो गया है। वह बात पुस्तक की युक्ति और व्यवस्था है। यह पूर्वीय लोगों के लिए बिलकुल नई चीज़ है। यदि इसकी व्याख्यान-शैली पूर्वीय न होती और यदि यह इस अत्यन्त प्राचीन संस्कृत भाषा में लिखी हुई न होती तो अनेक लोग इसे ज़रूर किसी योरपीय की रचना मान लेते।

इसका रचयिता कोई भी हो, पर इसने इस देश में और सारे विशाल चीन साम्राज्य में एक

कोलाहल मचा दिया है। प्रत्येक श्रेणी के लोग इसे बड़ी उत्सुकता के साथ पढ़ते है । अनेक विद्वान् इसकी प्रशंसा करते नहीं थकते। इन्हीं कारणों से प्रेरित होकर मैंने इसका अँगरेजी में अनुवाद करने का निश्चय किया है, और मुझे प्रबल आशा है कि यह श्रीमानों के मनोरञ्जन का कारण होगा । मुझे इस काम को करने की अधिकतर प्रेरणा इसलिए भी होती है क्योकि मैं जानता हूँ कि आप इस बात का निर्णय नहीं कर सकते कि मेरा अनुवाद मूल से, बल्कि चीनी भाषान्तर से भी, कितना घटिया है । परन्तु कम से कम एक बात का उल्लेख करने के लिए मैं क्षमादान की याचना करना आवश्यक समझता हूँ । वह बात है मेरे अनुवाद की शैली और रीति का वर्णन । मैं श्रीमानों को विश्वास दिलाता हूँ कि जब मैंने इसका अनुवाद आरम्भ किया तब इसे वर्तमान रूप मे लाने का मुझे भी कुछ विचार न था। परन्तु इसकी प्रस्तावना में पाई जानेवाली विचार की श्रेष्ठ रीति, ओजस्विनी

वर्णन-शैली, और वाक्यों की लघुता ने स्वभावतः ही मुझे इस प्रकार की शैली का अवलम्ब करने पर बाध्य किया। अयूब, ज़बूर, सुलेमान और भविष्य-द्वक्ताओं की पुस्तकों के भाषान्तर के नमूने से मुझे अपने अनुवाद मे बहुत सहायता मिली है।

अच्छी बुरी जैसी यह है आपकी सेवा में उपस्थित है। यदि इससे श्रीमानों का कुछ भी मनोरञ्जन हो तो मै अपना बड़ा ही सौभाग्य समझूँगा। मैं अगले पत्र मे यहाँ के लोगों और उनके राष्ट्र का वर्णन करूँगा।

भवदीय विनीत सेवक

—:o:—

प्रस्तावना।

हे पृथ्वी के रहनेवालो ! विनीत भाव धारण करो, और दत्तचित्त होकर श्रद्धा के साथ स्वर्गीय उपदेश को सुनो।

जहाँ जहाँ सूर्य चमकता है, जहाँ जहाँ पवन चलती है, जहाँ जहाँ सुननेवाला कान है, जहाँ जहाँ सोचनेवाला मन है, वहाँ जीवन के नियमो का प्रचार हो, सचाई के तत्त्वों का आदर हो, और उनके अनुसार कर्म हो।

सब पदार्थों का कर्त्ता परमेश्वर है। उसकी शक्ति असीम है। उसका ज्ञान नित्य है; और उसका पुण्य सदा बना रहता है।

वह सारे विश्व का केन्द्र है। वह जगत् का जीवनदाता है।

वह नक्षत्रों को उँगली से छूता है और वे प्रसन्नतापूर्वक अपने पथ पर घूमने लगते है।

वह वायु के पङ्खों पर सवार होकर बाहर

चलता है और अनन्त आकाश के सभी प्रदेशों में अपनी इच्छा को पूर्ण करता है।

व्यवस्था, दया और सौन्दर्य उसके हाथ से प्रकट होते है ।

उसके सभी काम उसकी पवित्र बुद्धि का परिचय दे रहे है पर मानव-बुद्धि उसे जान नहीं सकती।

ज्ञान की छाया मनुष्य के मन पर से स्वप्न की तरह गुज़र जाती है। वह धुँधला सा देखता है मानों अन्धकार में हो; वह तर्क करता है और धोके में पड़ जाता है।

परन्तु परमेश्वर की बुद्धि सूर्य के प्रकाश की तरह है। वह तर्क नहीं करता, उसका मन सचाई का स्रोत है।

न्याय और दया उसके सिंहासन के सामने हाथ बाँधे खड़े रहते हैं; प्रेम और उदारता से उसका मुखमण्डल सदा प्रकाशमान् रहता है।

कौन है जो ईश्वर के सदृश प्रतापी हो? कौन

है जो बल में सर्वशक्तिमान् परमात्मा का मुकाबला कर सके? क्या बुद्धि मे कोई उसके समान है? क्या पुण्यशीलता में कोई उसके बराबर है?

हे मनुष्य! उसी ने तुझे उत्पन्न किया है। पृथ्वी पर तेरा स्थान उसी का निश्चित किया हुआ है। तेरी मानसिक शक्तियाँ सब उसी का दिया हुआ दान हैं। तेरे शारीरिक ढाँचे की अद्भुत रचना उसी के हाथ की कारीगरी है।

इसलिए तू उसकी वाणी को सुन क्योंकि वह दया और अनुग्रह से भरी हुई है। और जो उसकी आज्ञाओं का पालन करता है वह आत्मिक शान्ति-लाभ करेगा।

पहली पुस्तक

व्यक्तिरूप मे मनुष्य के धर्म

पहला प्रकरण ।

विचार ।

हे मनुष्य ! अपने मन मे विचार कर, और सोच कि तू किसलिए पैदा किया गया है ।

अपनी शक्तियों का चिन्तन कर; अपनी आवश्यकताओं और अपने सम्बन्धों का चिन्तन कर; इससे तुझे जीवन के कर्तव्यों का पता लग जायगा, और तेरे सारे मार्गों में तुझे व्यवस्था मिलेगी ।

जब तक तू अपने मन में अच्छी तरह न सोच ले, न तो कुछ बोल और न कोई काम कर । जो पग तू उठाये उसके परिणाम पर विचार करके उठा । इससे अपमान तुझसे दूर भागेगा; और लज्जा तेरे घर में घुसने न पायेगी; पश्चात्ताप तेरे निकट न

आवेगा, और तेरे कपोल शोक का निवास-स्थान न बनेंगे। बे-समझ मनुष्य अपनी ज़बान को लगाम नहीं देता। जो जी में आता है बक देता है, और अपने ही शब्दों की मूर्खता में फँस जाता है।

जो मनुष्य परिणाम पर विचार किये बिना सहसा कोई काम करता है वह उस व्यक्ति के सदृश है जो जल्दी में भागता हुआ बाड़ को फांद कर उसके दूसरी ओर गढ़े में जा गिरता है।

इसलिए विचार की आवाज़ को कान देकर सुनो; उसकी बातें बुद्धिमत्ता की बातें हैं, और उसके मार्ग तुझे निर्विघ्नता और सत्यता तक पहुँचा देंगे।

दूसरा प्रकरण।

विनय।

हे मनुष्य! तू कौन है जो अपनी बुद्धि पर इतना गर्व करता है? अपनी योग्यताओं पर तू इतना घमण्ड क्यों करता है?

यदि तू ज्ञानवान् बनना चाहता है तो सबसे पहले यह जान कि मैं अज्ञानी हूँ; और यदि तू दूसरों के निकट मूर्ख नहीं बनना चाहता तो अपने अभिमान में अपने आपको बुद्धिमान् समझने की मूर्खता मत कर।

रूपवती रमणी के सौन्दर्य को जैसे सादा वस्त्र निखार देते हैं वैसे ही विनयशील आचार बुद्धिमत्ता का सबसे उत्तम भूषण है।

लज्जाशील मनुष्य का भाषण सचाई की शोभा बढ़ा देता है; और उसके शब्दों का आत्म-सन्देह उसकी भूल को क्षमा कर देता है।

वह अपनी बुद्धि पर पूरा पूरा भरोसा नहीं करता; वह मित्र के परामर्श पर विचार करता और उससे लाभ उठाता है।

जब उसकी प्रशंसा की जाती है तो उसके कान बहरे हो जाते है और वह अपनी प्रशंसा को सच्ची नहीं समझता। वह अन्तकाल तक अपने गुणों से अनभिज्ञ रहता है।

जिस प्रकार घूँघट से रूप बढ़ जाता है उसी प्रकार विनयरूपी यवनिका से उसके गुण चमक उठते है।

विपक्ष में, दम्भी और अभिमानी मनुष्य को देखो; वह बहुमूल्य पोशाक पहनता है, बाज़ार में अकड़ कर चलता है, इधर उधर देखता जाता है, और चाहता है कि लोग उसे देखें।

वह ऊपर को सिर उठा कर चलता है, और ग़रीबों को घृणा की दृष्टि से देखता है। वह अपने से हीन व्यक्तियों को ठोकरें मारता है, और उससे श्रेष्ठ लोग उसके गर्व और मूर्खता पर हँसते हैं।

वह दूसरों की रांय का तिरस्कार करता है; वह अपनी ही राय पर भरोसा रखता है और धोखा खाता है।

वह अपने मन में अपने आपको बहुत बड़ा समझता है, अपनी प्रशंसा सुनने और सारा दिन अपने ही गुण गाने मे उसे आनन्द आता है।

वह आत्म-श्लाघा से बहुत फूलता है; परन्तु मिथ्याप्रशंसक उल्लू बना कर उसे खा जाता है।

तीसरा प्रकरण।

उपयोग।

हे मनुष्य! जो समय बीत गया वह फिर लौट कर न आयेगा, और जो समय आनेवाला है सम्भव है वह तेरे लिए न आये, इसलिए तू वर्तमान से लाभ उठा, भूत के खो जाने पर खेद न कर, और भविष्य पर बहुत ज़ियादा भरोसा न रख।

यह घड़ी तेरी है; अगली घड़ी भविष्यत् के गर्भ में है, और तू नहीं जानता कि वह तेरे लिए क्या लावे।

जो कुछ तू करना चाहता है, उसे फ़ौरन कर दे; जो काम प्रातः हो सकता है उसे सायङ्काल पर मत छोड़।

आलस्य दरिद्रता और दुःख की जननी है, परन्तु धर्मानुकूल परिश्रम करने से सुख की प्राप्ति होती है।

उद्योग से दरिद्रता भागती है; ऐश्वर्य और साफल्य पुरुषार्थी मनुष्य के सेवक हैं।

धन-सम्पत्ति, मान-प्रतिष्ठा, यश-कीर्ति, और राजकृपा किसको प्राप्त हैं? जो अनुद्योग को अपने निकट नहीं आने देता, और जो आलस्य को कहता है—"तू मेरा शत्रु है।"

वह ब्राह्म मुहूर्त में उठता है और रात को देर से सोता है; वह चिन्तन से मन का और क्रिया से शरीर का व्यायाम करता है, और दोनों को तन्दुरुस्त बनाये रखता है।

आलसी मनुष्य अपने लिए आप ही भार है; उसका समय सुगमता से नहीं बीतता; वह इधर उधर घूमता फिरता है और नहीं जानता कि क्या करे।

उसके दिन बादल की छाया की तरह गुज़र जाते हैं; वह अपने पीछे कोई स्मारक नहीं छोड़ जाता।

व्यायाम न करने से उसका शरीर रोगग्रस्त रहता है; वह काम करना चाहता है पर शक्ति न होने से हिल नहीं सकता। उसका मन अन्धकार से ढँपा रहता है, उसके विचारों में गड़बड़ रहती है; उसे ज्ञान-प्राप्ति की लालसा होती है पर उसमें उद्यम नहीं। वह बादाम तो खाना चाहता है पर उसे तोड़ने का कष्ट उठाना उसे पसन्द नहीं।

उसके घर की व्यवस्था ठीक नहीं; उसके नौकर उड़ाऊ और उच्छृङ्खल हैं; वह विनाश की ओर दौड़ा जा रहा है। वह इस विनाश को अपनी आँखों से देखता है, अपने कानों से सुनता है, वह अपना सिर हिलाता है और इससे बचना चाहता है, परन्तु उसमें धीरता नहीं है। अन्त को विनाश उसे बगुले की तरह आ घेरता है, और अनुताप और अप्रतिष्ठा उसे मरघट में ले जाते हैं।

चौथा प्रकरण।

स्पर्धा।

यदि तुझे यश की लालसा है, यदि तुझे अपनी प्रशंसा सुनने में आनन्द आता है, तो तू अपने को उस धूलि से ऊँचा कर जिससे कि तू बना है, और अपना कोई प्रशंसनीय उच्च उद्देश बना।

बरगद का विशाल वृक्ष, जिसकी शाखाएँ इस समय गगन का चुम्बन कर रही हैं, एक समय पृथ्वी के पेट में राई के समान छोटा सा बीज था।

तू अपने व्यवसाय में, चाहे वह कोई हो, शीर्षस्थानीय होने का यत्न कर; उन्नति में किसी को अपने से आगे न बढ़ने दे। तिस पर भी दूसरों के गुणों को देखकर जल मत, प्रत्युत अपनी बुद्धि को बढ़ा।

अपने प्रतिद्वन्द्वी को अधर्म्मयुक्त और निन्दनीय रीतियों से गिराने का यत्न मत कर, धार्मिक उपायों रा ही अपने आपको उससे बढ़ा, जिससे प्रधान

बनने की इस दौड़धूप में यदि तुझे सफलता प्राप्त न भी हो, तो यश तो तुझे मिल ही जाय।

पवित्र स्पर्धा से मनुष्य की आत्मा उच्च होती है; वह कीर्ति के लिए तड़पता है और दौड़ में दौड़ने-वाले की तरह गद्‌गद प्रसन्न होता है।

वह विघ्न-बाधाओं के होते हुए भी ताड़ के पेड़ की तरह बढ़ता है; और नभोमण्डल में, गरुड़ की तरह, बहुत ऊँचा उड़ता है और अपनी आँखें सूर्य के तेज पर लगाये रखता है।

महापुरुषों के दृष्टान्त रात को स्वप्न बन कर उसके सामने आते हैं; और दिन भर उनका अनुक-रण करने में ही उसे आनन्द प्राप्त होता है।

वह बड़े बड़े सङ्कल्प करता है; उनको पूरा करने में उसे आनन्द आता है; और उसका नाम सारे संसार में विख्यात हो जाता है।

लेकिन ईर्ष्यालु का हृदय विष और द्वेष से पूर्ण है; उसकी जिह्वा विष उगलती है; अपने पड़ोसी

की सफलता को देख कर उसका मन अशान्त हो जाता है।

वह अपनी कोठरी के अन्दर पड़ा हुआ जलता है; दूसरों के सद्गुण भी उसे दुर्गुण नज़र आते है।

विद्वेष और घृणा उसके हृदय को खाते रहते हैं, और उसे पल भर भी चैन नहीं मिलता।

उसके हृदय में पुण्य के लिए कोई प्रेम नहीं; और इसलिए वह समझता है कि मेरा पड़ोसी भी मेरे ही सदृश है।

जो लोग उससे बढ़ जाते हैं उनकी वह निन्दा करता है, और जो भी काम वे करते हैं उन सबका बुरा अर्थ निकालता है।

वह घात लगा कर बैठ जाता है और कोई न कोई अनिष्ट सोचता रहता है; परन्तु लोग उससे घृणा करते हैं; वह मकड़ी की तरह अपने ही जाले में उलझ कर मर जाता है।

पाँचवाँ प्रकरण।

दूरदर्शिता।

दूरदर्शिता की बातों को दत्तचित्त होकर सुन; उसके उपदेशो पर ध्यान दे, और अपने हृदय में उनका संग्रह कर; उसके तत्त्व सार्वत्रिक हैं, और सारे सद्गुण उसी के आश्रित हैं; वह मानव-जीवन की पथप्रदर्शिका और स्वामिनी है।

अपनी ज़बान को लगाम दे, अपने होठें को नियम में रख, जिससे कहीं तेरे मुँह से निकले हुए शब्द ही तेरी शान्ति को नष्ट न कर दें।

लँगडे की हँसी मत कर, ऐसा न हो कहीं तू भी कभी लँगड़ा हो जाय; जो मनुष्य दूसरे की त्रुटियों की खुशी से चर्चा करता है उसे अपनी त्रुटियों को सुन कर दुःख होगा।

बहुत बोलने का फल अनुताप होता है इस-लिए चुप रहने में ही भलाई है।

बातूनी मनुष्य समाज में उत्पात के सदृश है;

उसके बकवाद को सुनते सुनते कान थक जाते हैं; उसके शब्दों की तेज़ धारा वार्तालाप को नीरस कर देती है।

शेख़ी मत मार, क्योंकि इससे लोग तेरा तिरस्कार करने लगेंगे; दूसरे की हँसी मत उड़ा, क्योंकि यह भय से ख़ाली नहीं है।

कटु परिहास मित्रता का घातक है, जो मनुष्य अपनी ज़बान को क़ाबू में नहीं रख सकता वह कष्ट और सङ्कट में फँस जाता है।

अपनी स्थिति के अनुसार अपने लिए यथोचित उपकरण एकत्र कर, परन्तु अपने वित्त से बाहर ख़र्च मत कर, जिससे युवाकाल की मितव्ययिता वृद्धावस्था में तेरे सुख का कारण हो। [तृष्णा पाप-कर्मों की जननी है, परन्तु मितव्ययिता हमारे सद्गुणों की रक्षक है।] ⁕

तू अपने काम से काम रख; देश और जाति

⁕ प्रथम संस्करण में यह नहीं है।

के झगड़े अधिकारिवर्ग को निपटाने दे। तेरा मनोरञ्जन ऐसा न होना चाहिए जिसके लिए कि तुझे भारी व्यय करना पड़े, ताकि उसके ख़रीदने का कष्ट कहीं उसके उपभोग से प्राप्त होनेवाले आनन्द से न बढ़ जाय।

ऐश्वर्य्य में चौकसीरूपी नेत्रों को बन्द मत कर, और न विपुलता में मितव्ययिता को हाथ से छोड़, जो मनुष्य जीवन की अनावश्यक चीज़ों में मग्न रहता है उसे एक दिन तत्सम्बन्धी आवश्यक चीज़ों के अभाव के कारण रोना पड़ता है।

दूसरों के अनुभव से बुद्धिमत्ता सीख, उनकी त्रुटियों से अपने दोषों को ठीक कर।

परीक्षा करके देख लेने के पहले किसी पर विश्वास मत कर; परन्तु अकारण किसी पर अवि-श्वास भी न कर; यह अनुदारता है।

परन्तु जब कोई मनुष्य ईमानदार साबित हो जाय, तो फिर उसे अपने हृदय में ख़ज़ाने की तरह सुरक्षित रख, उसे एक अमूल्य रत्न समझ।

अर्थलोलुप मनुष्य की कृपाओं से दूर भाग; वे तेरे लिए जाल है। तू उसके अनुग्रह से कभी उऋण न हो सकेगा।

जो चीज़ कल काम आ सकती है उसका आज उपयोग मत कर; जो काम दूरदृष्टि और सावधानी से हो सकता है उसे दैवयोग पर मत छोड़।

फिर भी यह मत समझ कि दूरदर्शिता से तुझे अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी, क्योंकि कौन जानता है कि आज रात को क्या होगा।

मूर्ख सदा भाग्यहीन नहीं होता, और न बुद्धिमान् नित्य सफलमनोरथ ही रहता है; पर मूर्ख को कभी पूर्ण आनन्द नहीं प्राप्त होता, और न बुद्धिमान् कभी सर्वथा दुःखी रहता है।

छठा प्रकरण।

धैर्य्य।

इस संसार में जन्म लेनेवाले प्रत्येक मनुष्य विपत्ति और दुर्भाग्य, दरिद्रता और दुःख, शोक

और पीड़ा का थोड़ा बहुत अवश्य मुँह देखना पड़ता है।

इसलिए, हे मनुष्य! तुझे उचित है कि तू बाल्यावस्था से ही अपने हृदय को धैर्य और निर्भीकता से दृढ बना ले ताकि तू अपने हिस्से के दुःखों को धीरता से सहन कर सके।

मरुस्थली में ऊँट जिस प्रकार भूख, प्यास, ताप और कष्ट झेलता है, लेकिन मूर्च्छित होकर गिर नहीं पड़ता; उसी प्रकार मनुष्य का धैर्य सब विपत्तियों में उसे आश्रय देता है।

श्रेष्ठ आत्मा भाग्य के विद्वेष की परवाह नहीं करता; उसकी आत्मा की महत्ता में इससे कोई फ़र्क़ नहीं आता।

वह अपने सुख को भाग्य के अनुग्रह पर निर्भर नहीं रखता, इसलिए उसके भृकुटि चढ़ाने पर वह भयभीत नहीं होता।

समुद्र-तट की चट्टान के सदृश वह दृढ़ बना

रहता है, और विपत्तिरूपी तरङ्गों के थपेड़े उसके पांवों को नहीं उखाड़ सकते ।

वह पहाड़ी दुर्ग के मीनार की तरह अपना सिर ऊपर को उठाता है, और भाग्य के वाण उसके पांवों पर गिरते हैं।

भय के समय उसके हृदय की धीरता उसे आश्रय देती है, और उसके मन की स्थिरता उसे साहाय्य प्रदान करती है ।

वह जीवन की विपदाओं का उस मनुष्य की तरह सामना करता है जो युद्ध में जाता है और विजय-लाभ करके घर लौटता है ।

उसकी प्रशान्ति उसकी विपत्तियों के भार को हलका कर देती है; उसका एकान्त-निश्चय उनको दबा लेता है ।

परन्तु कातर पुरुष की भीरु आत्मा उसे धोखा देती है और वह लज्जित होता है ।

दरिद्रता से दुखी होकर वह नीचता के काम

करता है; और चुपके से अपमान को सहन करके पीड़ा को निमन्त्रण देता है।

जैसे हवा के झोंके से सरकण्डा हिल जाता है वैसे ही वह दुःख की छाया से ही कांप उठता है।

सङ्कट के समय वह व्याकुल और हतज्ञान हो जाता है; विपत्ति-काल में उस का हृदय बैठ जाता है, और निराशा उसकी आत्मा को दबा लेती है।

सातवाँ प्रकरण।

सन्तोष।

हे मनुष्य! मत भूल कि पृथ्वी पर तेरी स्थिति परमेश्वर की पवित्र बुद्धि-द्वारा निश्चित हुई है। वह तेरे हृदय की बातों को जानता है, तेरी लालसाओं की निःसारता उसे भली भाँति ज्ञात है, वह प्रायः दया करके तेरी प्रार्थनाओं को अस्वीकार कर देता है।

फिर भी सब युक्ति-सङ्गत कामनाओं, और सभी धार्मिक चेष्टाओं के लिए उसकी उदारता ने साफल्य की सम्भावना प्रतिष्ठित की है।

वह व्याकुलता जिसका तू अनुभव करता है, वे विपत्तियाँ जिन पर तू विलाप करता है, उनका मूल तेरी मूर्खता, तेरा अहङ्कार. और तेरी रुग्ण-भावना है।

इसलिए ईश्वरीय विधान पर अन्तर्विलाप न कर, प्रत्युत अपने हृदय को शुद्ध कर; न मन में यही कह कि 'यदि मेरे पास सम्पत्ति, शक्ति और अवकाश हो तो मैं सुखी हूँगा"; क्योंकि याद रख कि जिनके पास ये मौजूद है वे किन किन दुःखों में फँसे हुए है।

निर्धन मनुष्य धनियो के क्लेशों और चिन्ताओं को नहीं देखता; वह शक्तिशाली लोगों की कठिनाइयों और व्याकुलताओं का अनुभव नहीं करता; वह नहीं जानता कि बेकार मनुष्य का जीवन कैसा दूभर होता है; इसी लिए वह अपनी अवस्था पर व्यथित रहता है।

किसी मनुष्य को बाहर से सुखी देखकर ईर्ष्या मत कर, क्योंकि तू उसके गुप्त दुःखों को नहीं जानता।

थोड़े पर सन्तोष करना सबसे बड़ी बुद्धिमत्ता है, और जो मनुष्य अपने धन को बढ़ाता है वह अपनी चिन्ताओं को बढ़ाता है; लेकिन सन्तुष्ट मन एक गुप्त ख़ज़ाना है, और वह दुःख की पहुँच से बाहर है।

यदि तू लक्ष्मी के प्रलोभनों में फँसकर न्याय, मर्यादा, उदारता और विनय को तिलाञ्जलि न दे दे, तो खुद ऐश्वर्य भी तुझे दुःखित नहीं कर सकता।

परन्तु यह तू कहाँ सीखेगा कि विशुद्ध आनन्दामृत इस अनित्य मानव का पेय नहीं।

भलाई एक दौड़ है जो नारायण ने नर के लिए नियत कर दी है, और सुख उसका लक्ष्य है, जहाँ कि दौड़ को समाप्त किये बिना कोई पहुँच नहीं सकता, फिर उसे नित्यता के प्रासादों में राजमुकुट मिलता है।

आठवाँ प्रकरण।

मिताचार।

इस जीवन में जो सबसे बड़ा आनन्द तू प्राप्त कर सकता है वह यह है कि भगवान् से तुझे बुद्धि और स्वास्थ्य मिला हो।

यदि तुझे ये सुख प्राप्त है, और तू उन्हें बुढ़ापे तक बनाये रखना चाहता है, तो विषयासक्ति के प्रलोभनों से बच, और उसके विमोहनों से दूर भाग।

जब वह अपने स्वादिष्ट भोजन तेरे सामने रखती है, जब उसकी मदिरा तेरे प्याले में चमकती है, जब वह अपना मोहिनी रूप तेरे सामने प्रकट करती है, जब वह मृदु हास्य से तुझ पर कटाक्ष करती है और तुझे आमोद प्रमोद में लिप्त होने की प्रेरणा करती है उस समय तेरे लिए भारी आशङ्का है; उस समय तेरी बुद्धि को सावधान रहने की ज़रूरत है।

क्योंकि यदि तू उसके प्रलोभनों में फँस जायगा तो सख़्त धोखा खायगा और घोर क्षति उठायगा।

जिस सुख की वह आशा दिलाती है वह उन्माद में वदल जाता है; और उसके आनन्द रोग और मृत्यु का कारण वन जाते है।

विषयासक्ति के भोजनों पर दृष्टि डाल, उसके आमन्त्रित अतिथियों को ध्यानपूर्वक देख, और उसके मृदु-हास्यरूपी प्रलोभनों में फँसे हुए लोगों का अवलोकन कर।

क्या वे क्षीण नहीं? क्या वे रोगी नहीं? क्या वे निस्तेज नहीं?

उनके आमोद प्रमोद और कोलाहल के छोटे छोटे घण्टों के बाद दुःख और दीनता के सुदीर्घ दिन आ गये हैं; उसने उनकी अभिलाषाओं को ढँक दिया है और बिगाड़ दिया है, इसलिए अब उन्हे उसके स्वादिष्ट भोजनों मे कोई रस नहीं मिलता; जो उसके भक्त थे वही अब उसके शिकार हो गये है; जो लोग भगवान् के दिये हुए दान का दुरुपयोग करते है उनकी ऐसी ही दुर्गति होती है।

परन्तु वह कौन स्त्री है जो बड़ी सुललित रीति से उस मैदान में टहलती टहलती जा रही है ?

उसके कपोलों की लालिमा गुलाब को लज्जित कर रही है, उसके होठों से प्रातःकाल का माधुर्य बह रहा है, उसके नेत्रों से विनीत और पवित्र आनन्द टपक रहा है, और हार्दिक प्रसन्नता के साथ वह गाती हुई जा रही है।

उसका नाम तन्दुरुस्ती है, वह व्यायाम की पुत्री है, और मर्यादा के गर्भ से उत्पन्न हुई है; उनके पुत्र उस गिरिमाला में रहते है जो सानतोन होप के उत्तरीय प्रदेशों में फैली हुई है।

वे वीर, उद्यमशील और तेजस्वी हैं, उनकी भगिनी के सभी सद्गुण उनमें पाये जाते है।

ओज उनकी नाड़ियों को कसता है, वीर्य उनकी अस्थियों में निवास करता है; और परिश्रम ही उनका दिन भर का प्रमोद है।

उनके पिता के व्यापार उनकी अभिलाषाओं

को उत्तेजित करते है और उनकी माता के आहार उनको तरोताज़ा करते हैं।

मनोविकारों से लड़ना उनका विनोद है; दुर्व्यसनों को जीतना उनकी ओजस्विता है।

उनके आनन्द परिमित हैं, इसलिए वे बने रहते हैं; उनका विश्राम अल्प है पर वह गाढ़ और अविकल है।

उनका रक्त शुद्ध है; उनके मन शान्त है; इसलिए वैद्य लोग उनके घरों का मार्ग नहीं जानते।

परन्तु निर्विघ्नता मनुष्य के पुत्रों के यहाँ निवास नहीं करती, और न इनके घरों में परित्राण ही पाया जाता है।

वाहर वे नई नई आशङ्काओं से घिरे रहते है, और घर के भीतर विश्वासघातक छिपे रहते हैं ताकि अवसर पाते ही उन्हें फँसा दें।

उनके स्वास्थ्य, उनके वल, उनके सौन्दर्य और उत्साह ने लम्पट प्रीति के हृदय में कामना उत्पन्न कर दी है।

वह अपने लतामण्डप मे खड़ी उनके अनुराग के लिए आराधना करती है, और अपने प्रलोभनों को फैलाती है।

उसके अङ्ग कोमल और ललित हैं, उसका पहरावा मनोहर और चित्ताकर्षक है; उसके नेत्रों से विलास टपक रहा है, और उसके वक्षःस्थल पर प्रलोभन बैठा हुआ है, वह अपनी कोमल उँगली से उनकी तरफ सङ्केत करती है; वह अपने रूप से उन्हें लुभाती है, और अपनी मीठी और प्यारी प्यारी बातों से उनको अपने मायाजाल में फँसाने का यत्न करती है।

हा! उसके प्रलोभनों से दूर भाग; उसकी मनोहारिणी बातों को मत सुन। यदि तू उसके विलासपूर्ण नेत्र-कटाक्ष से घायल हो गया, यदि तूने उसकी मधुर वाणी को ध्यान से सुना, यदि तूने उसे अपनी कोमल बाहें अपने गले में डालने दीं, तो सदा के लिए तू उसका बन्दी हो जायगा।

इसके बाद लज्जा, रोग, दरिद्रता, चिन्ता,

और अनुताप तुझे आ घेरेंगे। भोग-विलास से क्षीण होकर, विषयासक्ति से फूल कर, और आलस्य से कोमल बन कर बल तेरे अङ्गों को और स्वास्थ्य तेरे शरीर को छोड़ जायगा; तेरी आयु के दिन थोड़े रह जायँगे और वे भी अपयश मे बीतेंगे; तेरे सन्तापों की कोई सीमा न होगी, और कोई व्यक्ति तुझ पर दया न दिखायेगा।

दूसरी पुस्तक।

मनोविकार।

पहला प्रकरण।

आशा और भय।

आशा के वचन गुलाब के फूलों से अधिक मनोहर है और प्रतीक्षा को वे बहुत ज़ियादा सान्त्वनापूर्ण मालूम होते हैं; परन्तु भय की धमकियाँ हृदय को पानी पानी कर देती हैं।

तिस पर भी आशा पर मत फिसल, और भय के कारण अपने कर्तव्य से मत गिर; इसी से तू अपने मन को दुःख और सुख दोनों में एक समान रहने के लिए तैयार कर सकेगा। पुण्यात्माओं के लिए मृत्यु का डर भी कोई डर नहीं; जो मनुष्य कोई पाप नहीं करता उसे किसी का डर नहीं।

तेरे सभी कामों में एक युक्तिसङ्गत विश्वास ...र प्रयत्नों को उत्साहित करनेवाला हो; यदि तुझे

आरम्भ में ही सफलता की आशा नहीं, तो तू कभी सफलमनोरथ न होगा।

निःसार त्रासों से अपनी आत्मा को भयभीत मत कर; और न कल्पना के आभासों से हतोत्साह हो।

भय से विपत्ति पैदा होती है; परन्तु जो आशा रखता है वह मानो अपनी सहायता आप करता है।

जिस प्रकार बिल्ली को देखकर कबूतर आँखें बन्द कर लेता है, लेकिन अपने शरीर को भूल जाता है; उसी प्रकार भीरु पुरुष के त्रास उसे सङ्कट में डाल देते है।

यदि तू किसी काम को असम्भव समझता है तो तेरी निराशा उसे वैसा बना देगी; परन्तु जो दीर्घोद्योग करता है वह सब कठिनाइयों को जीत लेता है।

भित्तिहीन आशा मूर्ख के मन को सान्त्वना देती है; परन्तु बुद्धिमान् उसका पीछा नहीं करता।

किसी कामना को मन में स्थान देने के पहले भली भाँति उस पर विचार कर ले; सम्भाव्यता की

सीमा के वाहर अपनी आशाओं को मत जाने दे; इससे तेरे कार्य्य सफल होंगे, और तेरा हृदय विफलताओं से व्यथित न होगा।

दूसरा प्रकरण।

हर्ष और शोक।

आमोद के आवेश से अपने मन को उन्मत्त मत होने दे, और न शोक के भार के नीचे अपने हृदय को दबने दे; न तो संसार का कोई हर्ष तुझे इतना रिझाये, और न कोई शोक इतना हतोत्साह करने पाये कि तू मर्यादा के मार्ग का उल्लङ्घन कर दे। देखो, आनन्द का घर वह सामने दीख पड़ता है; इसके वाहर रङ्ग किया हुआ है जिससे वह बहुत सुन्दर मालूम होता है; इसके अन्दर आमोद और उल्लास का कोलाहल निरन्तर हो रहा है, इससे वह फ़ौरन पहचाना जाता है।

इसकी मालकिन द्वार पर खड़ी आने जाने-

वालों को उच्च स्वर से बुलाती है; वह गाती है, चिल्लाती है, और बराबर हँसती जाती है।

वह उन्हें अन्दर जाकर जीवन के आनन्दों का रसास्वादन करने के लिए निमन्त्रित करती है, और उनसे कहती है कि ये आनन्द तुम्हें और कहीं नहीं मिल सकेंगे।

परन्तु तू उसके घर में प्रवेश मत करना, और न उन लोगों से मेल जोल रखना जो उसके यहाँ आते जाते है।

वे अपने आपको हर्ष के पुत्र कहते हैं, वे हँसते हैं और बड़े प्रमुदित जान पड़ते हैं, परन्तु उनकी सभी चेष्टाओं से उन्माद और मूर्खता टपकती है।

उनके हाथ अनिष्ट से भरे हुए है और उनके पैर पाप की ओर जाते हैं; उनके चारों ओर आशंका ही आशंका है, और उनके पाँवों के नीचे सर्वनाश का गढ़ा मुँह खोले पड़ा है।

अब तनिक दूसरी ओर भी देखो; वृक्षों की

छाया में मनुष्यों की दृष्टि से छिपा हुआ शोक का निकेतन है।

उसके हृदय से निःश्वास निकल रहे हैं, उसका मुख विलाप की धारा वहा रहा है; मानव-जीवन के दुःखों का वर्णन करने में ही उसे आनन्द आता है।

वह जीवन साधारण घटनाओं को देखता और रोता है; मनुष्यों के दोष और दुष्कर्म ही उसकी बातचीत का विषय है।

उसे सारा संसार दुःखमय दिखाई देता है; प्रत्येक वस्तु मे उसे अपने मन का अन्धकार प्रति-बिम्बित दीख पड़ता है; दिन रात उसके घर में दुःख का ही रोना सुनाई देता है। उसकी कोठरी के पास न जाना, उसका श्वास विषमय है; उससे जीवनरूपी उद्यान की शोभा और सौन्दर्य को बढ़ानेवाले फल सूख जाते हैं और फूल मुरझा जाते है।

हर्ष के सुख-घर से कतराते हुए कहीं इस :ख-घर की तरफ़ न भटक जाना; परन्तु उस

मर्यादा के मार्ग का अवलम्बन करना जो तुझे सुखपूर्वक मानसिक स्थिरता के निकुञ्ज के निकट ले जायगा।

उस निकुञ्ज में शान्ति, सन्तोष और कुशल निवास करते हैं। मन की स्थिरता सानन्द है पर वह छिछोरी नहीं; वह गम्भीर है पर जड़ नहीं; वह जीवन के हर्ष और शोक को समान दृष्टि से देखती है।

यहाँ से तू, पर्वत-शिखर की तरह, उन लोगों की मूर्खता और क्लेश को देख जो अपने मन की निरङ्कुशता के कारण उच्छृङ्खल उल्लास और आमोद के साथियों के यहाँ रहते हैं, या निराशा और शोक से प्रभावित होकर अपना सारा जीवन मनुष्य-जीवन के दुःख और दुर्विपाक का रोना रोने में ही गुज़ारते हैं।

तू उनकी ओर दया की दृष्टि से देख। उनकी भूलें तुझे पथभ्रष्ट होने से बचायेंगी।

तीसरा प्रकरण ।

क्रोध ।

जिस प्रकार उग्र आंधी वृक्षों को जड़ों से उखाड़ डालती है और प्रकृति के सुन्दर मुखमण्डल को कुरूप बना देती है, या भूकम्प जिस प्रकार बड़े बड़े नगरों को तहस नहस कर देता है, उसी प्रकार क्रोध करनेवाले व्यक्ति का कोप इर्द गिर्द उपद्रव फैलाता है, विध्वंस और भय उसके सेवक है ।

परन्तु अपने दोषों पर विचार कर और इन्हें मत भूल; इस से तू दूसरों की त्रुटियों को क्षमा करेगा ।

अपने हृदय में क्रोध का पालन पोषण मत कर, क्योंकि यह एक तीक्ष्ण तलवार के सदृश है जिससे अपनी छाती या मित्र का गला कट जाता है ।

यदि तू छोटी छोटी छेड़ों को शान्तिपूर्वक सहन कर लेगा तो यह तेरी बुद्धिमत्ता समझी जायगी;

और यदि तू उन्हें अपने स्मृतिपट से ही मिटा देगा तो तेरा मन तुझे बुरा भला न कहेगा।

क्या तू नहीं देखता कि क्रोध के समय मनुष्य में समझ नहीं रहती ? जिस समय तू शान्त है और तुझमें सोच समझ बनी हुई है उस समय दूसरों के क्रोध से शिक्षा ग्रहण कर।... .... क्रोध में कुछ न कर; क्या तू तूफ़ान के समय अपनी नौका समुद्र में डालेगा ?

यदि क्रोध को क़ाबू में रखना तेरे लिए कठिन है तो इसे पहले से ही रोकने का यत्न कर; इसलिए क्रोध उत्पन्न करनेवाली बातों से बच, और जब वे उपस्थित हों तो उनसे अपनी रक्षा कर।

मूर्ख औद्धत्य की बातों से चिढ़ जाता है, लेकिन बुद्धिमान् उन्हें हँस कर टाल देता है।

अपने हृदय में प्रतिहिंसा को स्थान मत दे; इससे तेरी आत्मा को दुःख मिलेगा, और इसकी उत्तम प्रवृत्तियाँ नष्ट हो जायँगी।

बदला लेने की अपेक्षा सदा क्षमा करने के

लिए ज़ियादा उद्यत रह; जो मनुष्य बदला लेने की ताक में रहता है वह मानों अपने विरुद्ध घात लगाता है, और अपने सिर पर आप विपत्ति लाता है।

क्रुद्ध मनुष्य के क्रोध को कोमल उत्तर उसी प्रकार शान्त कर देता है जिस प्रकार कि आग की गरमी को पानी ठण्डाकर देता है, और जो मनुष्य पहले तेरा शत्रु था वह तेरे मृदु शब्दों को सुन कर तेरा मित्र बन जाता है।

सोच कि कितनी थोड़ी बातें क्रोध करने के योग्य है, और तुझे आश्चर्य होगा कि इन पर सिवा मूर्ख के और कोई क्रोध नहीं कर सकता।

यह सदा मूर्खता और निर्बलता से पैदा होता है, परन्तु याद रख, और विश्वास कर कि इसका अन्त पश्चात्ताप है।

मूर्खता के पीछे अप्रतिष्ठा चलती है, और क्रोध के पीछे अनुताप खड़ा होता है।

चौथा प्रकरण।

करुणा।

जैसे वसन्त का हाथ पृथ्वी पर फूल और कलियाँ बखेरता है, जैसे ग्रीष्म की कृपा से फ़सलें पक कर तैयार होती है, वैसे ही करुणा की मुस-कराहटें विपत्ति में फँसे हुए लोगों के लिए सुख का कारण होती हैं।

जो दूसरों पर दया दिखाता है मानो वह खुद को दूसरों की करुणा का पात्र बनाता है; लेकिन जो करुणा-शून्य है वह दूसरों की दया का अधिकारी नहीं।

जैसे भेड़ के बच्चे की दुःख-भरी आवाज़ पर बूचड़ को दया नहीं आती उसी प्रकार क्रूर मनुष्य का हृदय दूसरों का दुःख देखकर नहीं पसीजता।

सदय मनुष्य के अश्रु वसन्त के गुलाब से गिरने-वाली ओस की बूँदों से भी अधिक मधुर हैं।... ...इसलिए दीन दुखियों के रुदन को सुनकर अपने

कान बन्द मत कर; और निर्दोषों की विपत्तियों को देखकर अपने हृदय को पत्थर मत बना ले।

जब कोई अनाथ तुझसे सहायता की याचना करे, जब विधवा का हृदय दुःख के नीचे बैठ जाय और वह शोक के अश्रुओं के साथ तुझसे साहाय्य के लिए प्रार्थना करे तो उसके दुःख पर दया दिखा, और उन लोगों का हाथ पकड़ जिनका हाथ पकड़नेवाला और कोई नहीं।

जब तू किसी निराश्रय भिक्षु को नङ्गा और सरदी से ठिठुरता हुआ गली में फिरता देखे तो उदारता से अपने हृदय को खोल दे, और करुणा से उसे असामयिक मृत्यु से बचा, जिससे कि तेरी आत्मा सुख से रह सके।

जब एक दरिद्र मनुष्य मृत्यु-शय्या पर पड़ा चिल्ला रहा है, जब एक हतभाग्य अन्धकूप में पड़ा घुल घुल कर मर रहा है, या जब श्वेत केशोंवाला वृद्ध दया के लिए तेरी ओर देख रहा है, तब हे मनुष्य! उनके दुःख और दारिद्र्य पर आँखें बन्द

करके तू किस प्रकार अनावश्यक विषय-भोग में आनन्द ले सकता है!

पाँचवाँ प्रकरण।

कामना और प्रेम।

हे युवक, सावधान, कामुकता के प्रलोभनों से सावधान, देखना कहीं वेश्या तुझे अपने आमोद-प्रमोद के मायाजाल में न फँसा ले।

कामना का उन्माद उसके अपने ही व्यापारों को नष्ट कर देता है; उसके अनुराग में अन्धा होकर तू विनाश के गढ़े में जा गिरेगा।

इसलिए उसके हृदयग्राही वचनों पर आसक्त न हो, और न अपने मन को उसकी मोहिनी बातों में उलझने दे।

वाराङ्गना के मोह-जाल में फँसकर तेरा स्वास्थ्य-रूपी सरोवर, जिससे कि आनन्द की नदी बहती है,

शीघ्र ही सूख जायगा, और उल्लास का प्रत्येक स्रोत वन्द हो जायगा।

भरी जवानी में तुझे बुढ़ापा आ घेरेगा; तेरा जीवन-मार्तण्ड तेरे जीवन-प्रभात में ही अस्ताचल का रास्ता लेगा।

जब किसी कामिनी में रूप और लावण्य के साथ विनय और शुद्धाचार भी हो तो उस सुन्दरी की कान्ति गगन-मण्डल के तारों से भी अधिक तेजोमयी और पवित्र होती है, और उसकी शक्ति के प्रभाव को रोकना निष्फल होता है।

उसके हृदय की शुभ्रता कमल को मात करती है; उसकी मुसकराहट पुष्प-वाटिका से वढ़ कर मनोरम होती है।

उसके नेत्रों की शुचिता कपोत के नेत्रों के सदृश है; उसके हृदय में सरलता और सत्यता निवास करती है।

उसके मुख के चूमे मधु से वढ़ कर मीठे हैं,

श्रौर उसके होठों से अरब देश की सुगन्धियां निक-
लती हैं।

प्रेम की कोमलता के लिए अपना हृदय बन्द
मत कर; उसकी शिक्षा की पवित्रता तेरे हृदय को
श्रेष्ठ बनायेगी, श्रौर उसे कोमल बनाकर शुद्ध संस्कारों
को ग्रहण करने के लायक़ कर देगी।

तीसरी पुस्तक

स्त्री ।

हे प्रेम की सुन्दर पुत्री ! दूरदर्शिता की बातें कान लगा कर सुन; और सचाई की आज्ञाओं को हृदय में स्थान दे; इससे तेरे हृदय की चारुता तेरे रूप की शोभा बढ़ायेगी और तेरे सौन्दर्य में, जो गुलाब के फूल के सदृश है, अरुणिमा के जाते रहने पर भी, मिठास बराबर बनी रहेगी ।

यौवन की वसन्त-ऋतु में और जीवन के प्रभात में जब पुरुषों की आँखें तेरी ओर हर्ष से देखेंगी, और प्रकृति तेरे मन में उनके कटाक्षों के अर्थ प्रकट करेगी उस समय उनकी मोहिनी बातों को ज़रा सावधानी से सुनना; अपने हृदय को सँभालना, और उनकी मीठी मीठी बातों पर मत जाना ।

स्मरण रख तू पुरुष की उचित साथिन बनाई गई है, तू उसकी विषय-वासनाओं की दासी नहीं । तेरे जीवन का उद्देश उसकी नीच मनःकामनाओं

को पूरा करना नहीं, प्रत्युत जीवन के आयासों में उसका हाथ बटाना, अपने कोमल प्रेम से उसको सान्त्वना देना, और अपनी मधुर प्रीति से उसकी चिन्ता को दूर करना है।

वह कौन स्त्री है जो पुरुष के मन को मोह लेती है, जो उसे अपने प्रेम-पाश में फाँस लेती है, और उसके हृदय पर शासन करती है?

देखो! वह सामने अपूर्व मधुरता के साथ अल-बेलेपन से चली आ रही है; उसका हृदय सब प्रकार के पापों से शून्य है, और उसके कपोलों पर लज्जा है।

उसका हाथ काम में लगा हुआ है; उसके पैरों को व्यर्थ घूमने में आनन्द नहीं आता। उसका शरीर और वस्त्र साफ़-सुथरे हैं; वह मर्यादा के साथ खान पान करती है; नम्रता और सौम्यता मानों उसके सिर पर तेजस्क मुकुट हैं।

उसकी वाणी गान के समान सुरीली है; और उसके होठों से मधु की सी मिठास टपकती है।

उसकी सभी बातों में शिष्टता पाई जाती है; उसके उत्तरों में सचाई और कोमलता है।

सहिष्णुता और आज्ञाकारिता उसके जीवन की शिक्षाएँ हैं; शान्ति और सुख उसका पुरस्कार हैं।

दूरदर्शिता उसके आगे आगे चलती है, और सतीत्व हर समय उसकी सेवा में रहता है।

उसकी आँख से कोमलता और स्नेह टपकता है; लेकिन चातुर्य राजदण्ड लिये उसके ललाट पर बैठा है।

उसके सामने दुराचारी की जीभ बन्द हो जाती है; उसके सतीत्व का डर उसे चुप रखता है।

जब अपवाद फैल रहा होता है, और उसके पड़ोसी की कीर्ति एक जीभ से दूसरी जीभ पर उछलती फिरती है, उस समय यदि उदारता और उत्तम स्वभाव उसके मुख को नहीं खोलते, तो मौन की उँगली उसके होठों पर ज़रूर बैठी रहती है।

उसका हृदय पुण्यशीलता का प्रासाद है;

इसलिए उसे दूसरों में पाप का सन्देह नहीं होता।

वह पुरुष कैसा सौभाग्यवान् होगा जिसकी वह पत्नी बनेगी; वह बालक कैसा सुखी होगा जो उसको अपनी माता कह कर पुकारेगा !

घर का सारा प्रबन्ध उसके अधीन है, इसलिए उसके घर में शान्ति है; उसकी आज्ञाएँ न्यायसङ्गत होती हैं इसलिए उनका पालन होता है।

वह प्रातःकाल उठती है; वह अपने कामों पर विचार करती है; और प्रत्येक नौकर को उसके योग्य कार्य पर लगाती है।

अपने परिवार की देख-रेख में ही उसे आनन्द आता है; उसके शुभ-चिन्तन में ही वह अपने आपको मग्न रखती है; और उसके भवन में सफ़ाई और करीना दिखाई देता है।

उसके प्रबन्ध की दूरदर्शिता उसके स्वामी के लिए यश का कारण है; और वह लोगों से उसकी प्रशंसा सुन कर चुपचाप ख़ुश होता है

वह अपने सन्तानों को बुद्धिमत्ता की बातें सिखलाती है; वह अपने पवित्र चरित्र के दृष्टान्त से उनको शुद्धाचारी बनाती है।

उसके मुख से निकला हुआ शब्द उनके यौवन का नियम है, वे उसकी आँख का इशारा पाते ही उसकी आज्ञा का पालन करते हैं।

वह बोलती है और नौकर उसकी आज्ञा का पालन करने के लिए दौड़ जाते है; वह केवल इशारा करती है और काम हो जाता है; क्योंकि प्रेम का नियम उनके हृदयों पर शासन करता है; उसकी कृपा उनकी टाँगों में पङ्ख लगा देती है और वे उड़कर काम करने जाते हैं।

ऐश्वर्य में वह अभिमान से फूल नहीं जाती; विपत्ति में वह धैर्य से भाग्य के घावों पर मर्हम-पट्टी करती है।

उसके पति के कष्ट उसके परामर्श से हलके हो जाते हैं और उसके स्नेह से उनकी कटुता ~र हो जाती है; वह अपना हृदय उसके सामने

खोल कर रख देता है, और उसे सुख प्राप्त होता है।

धन्य है वह पुरुष जिसकी ऐसी पत्नी हो; धन्य है वह सन्तान जिसको उसे माँ कह कर पुकारने का सौभाग्य प्राप्त हो।

चौथी पुस्तक।

सगोत्रता।

या

जन्मसिद्ध सम्बन्ध।

पहला प्रकरण।

पति।

एक स्त्री को अपनी पत्नी बना, और परमेश्वर के नियम का पालन कर; एक स्त्री के साथ विवाह कर और समाज का एक सदाचारी सदस्य बन।

परन्तु इस काम में शीघ्रता मत कर, सोच समझ कर पग उठा; क्योंकि तेरा भावी सुख तेरी स्त्री के उत्तम निर्वाचन पर अवलम्बित है।

यदि उसका बहुत सा समय कपड़ों और गहनों में नष्ट होता है, यदि वह अपने ही सौन्दर्य पर ... है, और अपनी प्रशंसा से ही प्रसन्न होती है,

यदि वह बहुत हँसती है और ऊँची आवाज़ से बातें करती है, यदि उसका पैर पिता के घर मे नहीं टिकता और उसकी आंखे दिलेरी के साथ पुरुषों के चेहरों को घूरती हैं, यदि वह रूप-लावण्य में चन्द्रमा को भी लज्जित करती है तो तू उसके मोह-जाल से अपना मुख फेर ले, अपने पैरों को उसके मार्गों से दूर रख, और कल्पना के प्रलोभनों मे अपने मन को मत फँसने दे।

यदि तुझे कोई बुद्धिमती, शुद्धाचारिणी, विदुषी, और मनभावने रूपवाली कन्या मिले तो उससे निस्सन्देह विवाह कर ले, वह तेरी मित्र, जीवन में तेरी संगिनी और तेरी प्रियपत्नी बनने के योग्य है।

तू उसे अपने पर ईश्वर की विशेष कृपा समझ; तू उसके साथ प्रेम और प्रीति का व्यवहार कर जिससे तेरा प्रेम उसके हृदय को मोहित कर ले।

वह तेरे घर की स्वामिनी है, इसलिए उसका

सम्मान कर, जिससे तेरे नौकर उसकी आज्ञा में रहें।

उसकी प्रवृत्ति का अकारण विरोध मत कर; वह तेरी चिन्ताओं की हिस्सेदार है, उसे अपने सुख की भी साथी बना।

यदि तू उसमें कोई दोष देखता है तो नर्मी और प्यार से समझा, कठोरता से उसे अपने कहने पर चलने के लिए मजबूर मत कर।

अपने हृदय की बातें उससे गुप्त मत रख; वह तेरा सच्चा मन्त्री और सलाहकार है, वह तुझे धोखा न देगी।

उसके साथ पत्नीव्रत धर्म्म का पालन कर और दूसरों की बहू-बेटियों को मत ताक, क्योंकि वह तेरे बच्चों की मां है।

जब वह रोग-ग्रस्त हो या उसे किसी प्रकार का और दुःख हो, तो प्यार से उसके दुःख को दूर कर;

और दया से भरी तेरी एक दृष्टि उसके रोग-

शोक को घटा देगी। इसका असर दस वैद्यों की चिकित्सा से भी बढ़ कर होगा।

इस बात को मत भूल कि अबलाएँ कोमल होती है, उनका शरीर नर्म होता है; उसकी निर्बलता को सहन कर, और याद रख कि तुझमें भी अनेक त्रुटियाँ हैं।

दूसरा प्रकरण।

पिता।

तू जो पिता है अपने निक्षेप के महत्त्व को सोच, जिस बालक को तूने जन्म दिया है उसका पालन-पोषण करना तेरा कर्त्तव्य है।

बालक को अपने लिए ईश्वरीय कृपा या ईश्वरीय शाप बनाना स्वयं तेरे हाथ में है; यदि तू चाहे तो वह निकम्मा और अयोग्य बन जायगा, और यदि तू चाहे तो वह धर्म्मात्मा और उपयोगी मनुष्य बन सकता है।

इसलिए आरम्भ ही से उसको शिक्षा दे, और उसके हृदय-पट पर सचाई की बातें अङ्कित कर।

उसकी प्रवृत्ति के झुकाव को देख; उसके युवा-काल में उसको ठीक मार्ग पर चला; और किसी दुष्ट स्वभाव को उसके अन्दर जड़ न पकड़ने दे।

यदि तू उसकी देख-रेख करे तो वह पहाड़ी देवदार के पेड़ की तरह बढ़ेगा, उसका सिर जङ्गल के वृक्षों के ऊपर दिखाई देगा।

दुष्ट पुत्र पिता के लिए एक दूषण है; परन्तु सदाचारी बेटा उसके लिए यश का कारण है।

भूमि तेरी अपनी है, उसके तैयार करने में असावधानी मत कर, जैसा बीज तू बोयेगा वैसा ही फल खायगा।

तू उसे आज्ञाकारिता सिखा और वह तुझे सुख देगा, तू उसे विनय सिखला, और वह लज्जित न होगा।

उसे कृतज्ञता सिखा, और वह लाभ उठायेगा, उसे दान देना सिखा, और लोग उससे प्रेम करेंगे।

उसे मिताचार की शिक्षा दे, और उसकी तन्दुरुस्ती बनी रहेगी; उसे दूरदर्शिता की शिक्षा दे, और वह ऐश्वर्यवान् हो जायगा।

उसे न्यायशीलता सिखा, और संसार में उसका सम्मान होगा; उसे सचाई सिखा, और उसका हृदय उसकी कभी निन्दा न करेगा।

उसे उद्योग की शिक्षा दे, और उसकी सम्पत्ति बढ़ेगी; उसे उदारता सिखा, और उसकी आत्मा उच्च होगी।

उसे कला-कौशल सिखा, और उसका जीवन मनुष्य समाज के लिए उपयोगी होगा, उसे धर्म्म की शिक्षा दे, और उसकी मृत्यु शान्तिमयी होगी।

तीसरा प्रकरण।

पुत्र।

परमेश्वर की सृष्टि से बुद्धिमत्ता सीख और वहाँ से जो शिक्षा मिले उसका प्रयोग अपने पर कर।

हे पुत्र ! जङ्गल में जा; वन के चण्डूल पक्षी को देख, और उससे शिक्षा ग्रहण कर। उसने अपने पङ्खों पर अपने वृद्ध पिता को उठा रक्खा है; वह उसे सुरक्षित स्थान में ले जाकर रखता और उसे भोजन लाकर देता है।

पुत्र की पितृभक्ति ईरान देश की सुगन्धित धूप से भी बढ़कर मधुर है जिसे कि ईरानवासी सूर्य्य के सामने जलाते हैं; बल्कि वह अरब देश के मसालों के खेतों से-पश्चिमीय हवाओं के द्वारा उड़ कर आनेवाली सुगन्धियों से भी अधिक मनोरम है।

इसलिए अपने पिता का कृतज्ञ हो, क्योंकि उसी ने तुझे जन्म दिया है; और अपनी माता का भी कृतज्ञ हो, क्योंकि उसने तुझे पेट में पाला है और बाल्यावस्था में तेरी रक्षा की है।

पिता की बातों को ध्यान से सुन क्योंकि वे तेरे हित के लिए कही जाती हैं; उसके उपदेशों को कान लगा कर सुन, क्योंकि वे प्रेम के कारण किये जाते है।

वह तेरा मङ्गल चाहता है, वह तेरे सुख के लिए श्रम करता है; इसलिए तू उसका सम्मान कर, और उसके सफ़ेद बालों का अनादर मत कर।

अपनी बाल्यावस्था को मत भूल जब कि तू निरुपाय और अशरण था, और न अपने यौवन के हठ को विस्मरण कर। अपने वृद्ध माता-पिता की जीर्ण दशा का ख़याल रख; जीवन के सायङ्काल में उनकी हर प्रकार से सेवा-शुश्रूषा और सहायता कर।

इससे उनके जीवन के अन्तिम दिन शान्ति-पूर्वक कट जायँगे; और तेरी सन्तान, तेरे दृष्टान्त को देख कर, तेरे बुढ़ापे में भक्ति-भाव से तेरा पूजन करेगी।

चौथा प्रकरण।

भाई।

तुम सब एक ही पिता की सन्तान हो, उसने

सबको पाल-पोस कर बड़ा किया है; और तुम सबने एक ही जननी की छातियों से दूध पिया है।

इसलिए प्रेम के बन्धन तुझे तेरे भाइयों से सम्बद्ध रक्खें, और सुख और शान्ति तेरे पिता के घर में निवास करे।

जब तुम संसार में एक दूसरे से अलग हो तो अपने प्रेम और एकता के सम्बन्ध को मत भूलो; पराये को अपने से अच्छा मत समझ।

यदि तेरा भाई सङ्कट में है तो उसकी सहायता कर; यदि तेरी बहन कष्ट में है तो उसे भूल मत जा।

इस प्रकार तुम्हारे पिता की सम्पत्ति से उसकी सारी सन्तान को सहायता मिलेगी, और तुम्हारे पारस्परिक प्रेम के रूप में-उसकी देख-रेख तुम पर बराबर बनी रहेगी।

पाँचवीं पुस्तक।

विधि

या

मनुष्यों के नैमित्तिक भेद।

पहला प्रकरण।

बुद्धिमान् और मूर्ख।

बुद्धि का दान भगवान् के ख़ज़ाने हैं; उसने प्रत्येक को जितना जितना उसके लिए अच्छा मालूम हुआ उसका भाग नियत किया है।

क्या उसने तुझे बुद्धि दी है? क्या उसने तेरे मन को सत्यालोक से आलोकित किया है? तू मूर्खों को उनकी शिक्षा के लिए यह ज्ञान दे, अपनी उन्नति के लिए इसे बुद्धिमानों तक पहुँचा।

सच्ची बुद्धिमत्ता मूर्खता की अपेक्षा कम धृष्ट है; बुद्धिमान् बार बार सन्देह करता है और अपने

सङ्कल्प को बदल देता है; परन्तु मूर्ख हठ करता है, और सन्देह नहीं करता; वह अपनी अविद्या के सिवा और सब कुछ जानता है।

बुद्धिहीनता का गर्व एक घृणित चीज़ है, और बहुत बोलना मूर्खता का चिह्न है; फिर भी बुद्धिमानों का कर्तव्य है कि मूर्खों की धृष्टता को धैर्य से सहन करें और उनकी बेहूदगी पर दया दिखायें।

अपने मन में घमण्ड न कर, और न अपनी श्रेष्ठ बुद्धि पर इतरा, क्योंकि मनुष्य का निर्मल से निर्मल ज्ञान भी केवल अन्धापन और मूर्खता है।

बुद्धिमान् अपनी त्रुटि का अनुभव करके नम्र बन जाता है; वह व्यर्थ अपनी प्रशंसा के लिए परिश्रम नहीं करता। परन्तु मूर्ख अपने मन की उथली नदी में झांकता है, और उसकी तह पर पड़े हुए कङ्करों को देख कर प्रसन्न होता है; वह उनको बाहर निकालता है और मोती समझ कर दूसरों को दिखलाता है, और अपने बन्धु-बान्धवों से सुन कर फूला नहीं समाता।

वह ऐसी बातों में निपुणता प्राप्त करने पर गर्व करता है जो बिलकुल निकम्मी हैं; परन्तु जहाँ मूर्खता लज्जा-जनक होती है, वहाँ उसे समझ नहीं आती।

बुद्धिमत्ता के मार्गों का अनुसरण करते हुए भी उसका लक्ष्य मूर्खता ही होती है; और उसके सारे श्रम का बदला लज्जा और निराशा होता है। परन्तु बुद्धिमान् ज्ञान से अपने मन को शुद्ध करता है; कलाओं की उन्नति में ही उसे आनन्द आता है, और उनके द्वारा जनता को लाभ पहुँचा कर वह यश का पात्र बनता है।

इस पर भी, वह चरित्रशुद्धि को उच्चतम विद्वत्ता समझता है; और सुख-विद्या उसके जीवन का अध्ययन है।

दूसरा प्रकरण।

धनवान् और निर्धन।

जिस मनुष्य को परमेश्वर ने धन दिया है,

और साथ ही उसके सदुपयोग की समझ भी प्रदान की है, वह बड़ा ही धन्य है।

वह अपने धन को देखकर प्रसन्न होता है; क्योंकि इसके द्वारा वह भलाई कर सकता है।

वह दीन दरिद्रों की रक्षा करता है; वह बलवानों को निर्बलों पर अत्याचार नहीं करने देता।

वह दयापात्र लोगों की तलाश करता है; उनकी आवश्यकताओं को मालूम करता है; और दिखलावे को छोड़ कर, न्यायपूर्वक उनको पूरा करता है।

वह गुणियों को सहायता और पुरस्कार देता है; वह उपायज्ञ शिल्पियों को उत्साहित करता है, और प्रत्येक उपयोगी कला की सहायता के लिए दिल खोल कर धन देता है।

वह बड़े बड़े काम जारी करता है; उसका देश मालामाल हो जाता है, और वहाँ मजदूरों को कसरत से काम मिलने लगता है। वह नई नई कल्पनाएँ तैयार करता है, और कला-कौशल की वृद्धि होती है।

वह अपने भोजन की फालतु चीज़ों पर अपने निर्धन पड़ोसियों का अधिकार समझता है, और वह उनके साथ छल नहीं करता।

उसकी दौलत उसकी उदारता को नष्ट नहीं कर देती; इसलिए वह अपनी दौलत पर प्रसन्न होता है, और उसकी प्रसन्नता निर्दोष है।

परन्तु उस मनुष्य पर खेद है जो धन के ढेर जमा करता है, और केवल उस धन का मालिक होने से ही प्रसन्न होता है। वह ग़रीबों का गला घोंटता है, और उनके कठिन परिश्रम का कुछ ख़याल नहीं करता।

वह निर्दयता से लोगों पर अत्याचार करके बढ़ता फूलता है; अपने भाई के विनाश को देख कर उसके हृदय पर ज़रा भी चोट नहीं लगती।

अनाथों के अश्रुओं को वह दूध की तरह पी जाता है; विधवाओं की हाहाकार उसे सङ्गीत मालूम होता है।

धन के प्रेम से उसका हृदय पत्थर हो जाता

है, कोई शोक या विपत्ति उस पर असर नहीं कर सकती।

परन्तु दुराचार का शाप उसके पीछे पीछे जाता है, उसे हर समय किसी न किसी प्रकार का डर बना रहता है। उसके मन की चिन्ता, और उसकी आत्मा की लालची कामनाएँ उससे उन विपत्तियों का बदला लेती है जो कि उसके द्वारा दूसरों पर आई हैं।

निर्धन मनुष्य के क्लेश इस धनी की आन्तरिक वेदनाओं के मुक़ाबले में कुछ भी नहीं।

निर्धन को इसकी अवस्था देख कर सुखी, बल्कि प्रसन्न होना चाहिए; इसके लिए उसके पास अनेक कारण हैं।

वह शान्तिपूर्वक अपना रूखा सूखा भोजन खाता है; उसके खाने पर ख़ुशामदियों और पेटुओं का जमघटा नज़र नहीं आता।

उसको व्याकुल करने के लिए उसके पास

नौकरों का कोई समुदाय नहीं, और न मांगने-वालों का शोर ही उसे दिक़ करता है।

धनवानों के स्वादिष्ठ भोजन न मिलने के कारण वह उनके राजरोगों से भी बचा रहता है।

जो रोटी वह खाता है क्या वह खाने में सरस और मीठी नहीं मालूम होती? जो पानी वह पीता है क्या वह पीने में उसे सुखकर नहीं मालूम होता? हाँ, निस्सन्देह वह उत्तम है, प्रत्युत धन-वानों की बहुमूल्य मदिराओं से भी बढ़ कर सुख-कर है।

परिश्रम करने के कारण उसका स्वास्थ्य बना रहता है, रात को प्याल के बिस्तरे पर उसे वह मीठी निद्रा आती है, जो मख़मल के नर्म गदेलों पर धनियों को नसीब नहीं होती।

वह नम्रता से अपनी कामनाओं को परिमित करता है; उसकी आत्मा को सन्तोष की प्रशान्ति सम्पत्ति और ऐश्वर्य की प्राप्ति से अधिक प्रिय लगती है।

इसलिए धनवानों को अपने धन का अभिमान न करना चाहिए, और न निर्धनों को अपनी दरिद्रता पर खेद करना चाहिए, क्योंकि दैव की विधि उन दोनों में सुख वितरण कर रही है।

तीसरा प्रकरण।

स्वामी और भृत्य।

हे मनुष्य! सेवक होने से मत घबरा; यह विधाता का प्रबन्ध है और इसमें अनेक लाभ हैं; इसके द्वारा तू जीवन की चिन्ताओं और दुर्भावनाओं से दूर रहता है।

सेवक का यश उसकी प्रभुभक्ति है; उसके सबसे बड़े सद्गुण आज्ञाकारिता और अधीनता है।

इसलिए अपने स्वामी की झिड़कियों को धैर्य्य से सुन, जब वह तुझे बुरा भला कहे, तो कुछ मत बोल; तितिक्षा से तेरा चुप रहना निष्फल न जायगा।

उसके स्वार्थों और लाभों का हर वक्त ख़याल रख; उसके काम को उद्योग से कर; और जो विश्वास वह तुझमें रखता है उसका पात्र अपने आपको सिद्ध कर।

तेरा समय और तेरा परिश्रम तेरे स्वामी का है; तू उसे धोखा न दे, क्योंकि इनके लिए वह तुझे पैसे देता है।

हे स्वामी! यदि तू अपने सेवक से भक्ति की आशा करता है तो उसके साथ न्याय का वर्ताव कर; यदि तू चाहता है कि वह तेरी आज्ञाओं का पालन फ़ौरन करे तो उसे अनुचित काम करने को मत कह।

उसके अन्दर भी मनुष्य का भाव है, कठोरता और उग्रता से सम्भव है तू उसे भयभीत कर दे पर तू उसका प्रेम प्राप्त नहीं कर सकता।

भर्त्सना के साथ दया को और अधिकार के साथ तर्क को मिला कर काम कर; इसी से तेरी झिड़कियाँ उस पर असर करेंगी, और वह अपने काम को प्रसन्नतापूर्वक करेगा।

कृतज्ञता के कारण वह ईमानदारी से तेरी सेवा करेगा; प्रेम के कारण खुशी खुशी तेरी आज्ञाओं का पालन करेगा; और तू भी उसकी कर्तव्यपरायणता और उद्योग का उचित फल देने में त्रुटि मत रख।

चौथा प्रकरण।

राजा और प्रजा।

ऐ तू! जोकि परमेश्वर का प्यारा है, जिसे तेरे दूसरे मनुष्य-भाइयों ने, जोकि तेरे समान है; अपना राजा और शासक नियत किया है, पहले उनके विश्वास के महत्त्व और परिणाम पर विचार कर, अपनी उच्च पदवी और प्रभाव का पीछे से ख़याल करना।

तू लाल वेष में सिंहासन पर विराजमान है; राजमुकुट तेरे शिर की शोभा वढ़ा रहा है; राजदण्ड तेरे हाथ में है; परन्तु ये राजकीय चिह्न स्वयं

तेरे लिए नहीं दिये गये; तेरे अपने हित के लिए नहीं प्रत्युत तेरी प्रजा के हित के लिए दिये गये हैं।

राजा का यश अपनी प्रजा का कल्याण करने मे है; उसकी शक्ति और राज्य का आधार प्रजा-जनों के हृदय हैं।

बड़े बड़े महाराजाओं का हृदय उनके अधिकार की विशालता के अनुसार उच्च होता है; वे बड़ी बड़ी बातों पर विचार करते हैं, अपनी शक्ति के योग्य श्रेष्ठ व्यापारों की तलाश करते हैं।

राजा अपने राज्य के बुद्धिमान् लोगों को बुलाता है; उनके साथ स्वतन्त्रता-पूर्वक विचार करता है, और उन सबकी सम्मतियों को ध्यान से सुनता है।

वह अपनी प्रजा को विवेक-दृष्टि से देखता है, और गुणवानों की खोज करके उनको उनकी योग्यता के अनुसार कामों पर लगाता है।

उसके न्यायाध्यक्ष न्यायशील हैं; उसके मन्त्री बुद्धिमान् हैं; और उसके प्रियजन उसे धोखा नहीं देते।

वह कलाओं पर कृपादृष्टि रखता है, और वे बढ़ती फूलती हैं; विद्याएँ उसकी उदारता से उन्नति करती हैं।

विद्वानों और चतुरों की सङ्गति से उसे विशेष आनन्द प्राप्त होता है, वह उनके हृदयों में स्पर्धा पैदा करता है, और उसके राज्य की कीर्त्ति उनके उत्तम कार्यों से बढ़ती है।

व्यापारी का तेज जिससे वह अपने व्यापार को बढ़ाता है, किसान की दक्षता जिससे वह अपनी भूमि को उपजाऊ बनाता है, शिल्पी का कौशल, और पण्डित का मानसिक उत्कर्ष ये सब उसके प्रसाद से सन्मान और उसकी उदारता से पुरस्कार पाते हैं।

वह नई नई बस्तियाँ बसाता है; वह बड़े बड़े मज़बूत जहाज़ बनवाता है; वह सुभीते के लिए नदियों को खोलता है; वह आश्रय के लिए बन्दरगाह बनवाता है, उसकी प्रजा धन-धान्य से मालामाल हो जाती है; और उसके राज्य का बल बढ़ जाता है।

वह न्याय्यता और बुद्धिमत्ता से आईन (क़ानून) बनाता है; उसकी प्रजा निर्भय होकर अपने परिश्रम का फल खाती है, और उसकी व्यवस्था का पालन करने में ही उन्हें प्रसन्नता होती है।

उसके न्याय का आधार दया के नियम होते हैं; परन्तु अपराधियों को दण्ड देने में वह निष्ठुरता और पक्षपात-शून्यता से काम लेता है।

उसके कान प्रजा के दुःखों को सुनने के लिए सदा खुले रहते हैं; वह अत्याचारियों के हाथ को रोकता है, और प्रजा को उनके दौरात्म्य से बचाता है।

इसलिए प्रजा उसे पिता के समान पूजती है, और उसके प्रति भक्ति और प्रेम प्रकाशित करती है; वह उसे अपनी सारी सुख-सामग्री का संरक्षक समझती है।

प्रजा का प्रेम उसके हृदय में उनके लिए स्नेह पैदा कर देता है; उनके सुख की रक्षा ही उसकी चिन्ता का विषय बन जाता है।

उनके हृदयों मे उसके विरुद्ध शिकायत नहीं पैदा होती; इसलिए उसके शत्रुओं के कपट-प्रबन्ध उसके राज्य को संकट में नहीं डाल सकते।

उसके प्रति प्रजा की अनन्यभक्ति है; उसकी रक्षा के लिए वे लोहे की दीवार बन जाते है। शत्रु की सेना उनके सामने उसी प्रकार भाग जाती है जिस प्रकार पवन के सामने भूसा उड़ जाता है।

उसकी प्रजा के घरों में शान्ति और निर्भयता पाई जाती है, और तेज और शक्ति सदा उसके सिंहासन को घेरे रहते हैं।

छठी पुस्तक।

सामाजिक धर्म्म

पहला प्रकरण।

उपकारशीलता।

हे दयालु मनुष्य! जब तू अपने प्रयोजनों का विचार करे, और जब तू अपनी त्रुटियों को देखे उसका धन्यवाद कर जिसने तुझे तर्क और वाणी दी है, और मनुष्यों के समाज में रक्खा है जिससे तुम सब एक दूसरे को सहायता दो और अपने सामाजिक धर्म्मों का पालन करो।

भोजन, वस्त्र, निवास का सुभीता, अपकार से रक्षा, जीवन के सुख और आनन्द का उपभोग सब तुझे दूसरों की सहायता से ही प्राप्त होते हैं। यदि तू समाज में न रहता तो इन सुखों का उपभोग न कर सकता।

इसलिए, तेरा यह कर्तव्य है कि तू अपने दूसरे

मनुष्य-बन्धुओं का मित्र बने, जिस प्रकार कि तेरा इसमें हित है कि दूसरे तेरे मित्र हों।

जिस प्रकार गुलाब का फूल स्वभाव से ही मीठी सुगन्ध देता है, उसी प्रकार उपकारशील मनुष्य का हृदय उत्तम कार्य उत्पन्न करता है।

वह अपनी हार्दिक शान्ति और सुख को भोगता है, और अपने पड़ोसी के ऐश्वर्य और सुख को देख कर प्रसन्न होता है।

वह किसी की निन्दा नहीं सुनता; मनुष्यों की त्रुटियाँ और दोष देखकर उसे हार्दिक वेदना होती है।

उसकी कामना उपकार करने की है, और वह उसके लिए मौके की तलाश में रहता है; दूसरों के कष्टों को निवारण करने से उसे आन्तरिक शान्ति मिलती है।

विशाल हृदय रखने के कारण वह समग्र जगत् के कल्याण की कामना करता है; और हृदय की

उदारता के कारण वह संसार के सुख को बढ़ाने का यत्न करता है ।

दूसरा प्रकरण ।

न्याय ।

समाज की शान्ति न्याय पर, और व्यक्तियों का सुख उनकी सम्पत्ति के निर्विघ्न उपभोग पर अवलम्बित है ।

इसलिए अपने हृदय की कामनाओं को मर्यादा की सीमा का उल्लङ्घन मत करने दे, न्याय के द्वारा उन्हें सन्मार्ग पर चलने दे ।

अपने पड़ोसी की सम्पत्ति को पापदृष्टि से मत देख; उसकी किसी प्रकार की सामग्री को भी अपना हाथ लगा कर अपवित्र मत कर ।

किसी प्रकार का प्रलोभन या किसी प्रकार का क्रोधोद्दीपन तुझे उसके जीवन को सङ्कट मे डालने की प्रेरणा न करे ।

उसके चरित्र पर कलङ्क मत लगा; उसके विरुद्ध मिथ्या साक्षी मत दे।

उसके नौकर को उसकी नौकरी छोड़ देने या उसे धोखा देने के लिए मत बहका; और उसकी प्यारी पत्नी को पाप के प्रलोभन में मत डाल।

इससे उसको इतना भारी खेद होगा कि तू उस खेद को दूर न कर सकेगा, यह उसके प्राणों के लिए एक असह्य वेदना देगा।

मनुष्यो के साथ अपने लेन-देन मे निष्पक्ष और न्यायपरायण हो, और उनके साथ वैसा ही बर्ताव कर जैसा कि तू चाहता है कि वे तेरे साथ करें।

विश्वास-घात मत कर, जो मनुष्य तुझ पर भरोसा रखता है उसे धोखा मत दे, निश्चय रख कि परमेश्वर की दृष्टि में विश्वास-घात चोरी से बढ़कर पाप है।

निर्धन पर अत्याचार मत कर, और मज़दूर को उसकी वाजिब मज़दूरी से वञ्चित मत रख।

जब तू कोई चीज़ नफ़े पर बेचे तो अन्तःकरण-

की धीमी आवाज़ को सुन, और परिमित मूल्य लेकर ही सन्तुष्ट हो जा; ख़रीदनेवाले के अज्ञान का फ़ायदा न उठा।

तुझे जिसका ऋण देना है उसे चुका दे; क्योंकि जिसने तुझे उधार दिया है उसने तेरी ईमानदारी पर भरोसा किया है; उसका धन उसे न देना नीचता और अन्याय है।

हे समाज की सन्तान! अपने हृदय को टटोल, और जो कुछ तू कर चुका है उसे याद कर; यदि तूने अपने कारबार में कोई पाप किया है तो उस पर पश्चात्ताप कर और यथाशक्ति उसका शीघ्र ही प्रायश्चित्त कर।

तीसर प्राकरण।

दान।

वह नर धन्य है जिसने अपने हृदय में उदारता के बीज बोये हैं, उसका फल दान और प्रेम होगा।

उसके हृदय के स्रोत से पुण्य की नदियां और मनुष्य-जाति के कल्याण की धाराएं निकल कर बहेंगी।

वह दरिद्रों को उनके दु.ख में सहायता देता है; वह सकल मानव-जाति की ऐश्वर्य-वृद्धि में प्रसन्न होता है।

वह अपने पड़ोसी की निन्दा नहीं करता; वह ईर्ष्या और द्वेष की बातें नहीं सुनता, और न किसी के अपवाद की बातें इधर उधर फैलाता है।

जो लोग उसे दुःख देते हैं वह उन्हें क्षमा कर देता है; वह उन्हे स्मृति-पट पर से मिटा देता है; बदले और विद्वेष के लिए उसके हृदय मे कोई स्थान नहीं।

वह पाप के बदले में पाप नही करता, वह अपने शत्रुओं से भी घृणा नहीं करता; बल्कि उनके अन्यायों का बदला सहृदय उपदेशों में देता है।

मनुष्यों के दुख और शोक को देख कर उसका हृदय दया से पिघल जाता है; वह उनकी

विपत्तियों के बोझ को कम करने का यत्न करता है; और सफलता का आनन्द उसके परिश्रम का फल होता है।

वह रुष्ट मनुष्यों के कोप को शान्त और उनके झगड़ों को निवारण करता है; वह कलह और विरोध के अनिष्ट को रोकता है।

वह अपने पड़ोस में शान्ति और सुहृद् का भाव फैलाता है; और सब कहीं लोग उसकी प्रशंसा करते और उसे आशीर्वाद देते है।

चौथा प्रकरण।

कृतज्ञता।

जिस प्रकार वृक्ष की शाखाएं अपना रस उसी जड़ में वापस ले जाती हैं जहां से कि वह आया था; जिस प्रकार नदियां अपना जल उसी समुद्र मे डालती हैं जहां से कि वह उनके स्रोत में गया था;

उसी प्रकार कृतज्ञ मनुष्य का हृदय उपकार का बदला देकर प्रसन्न होता है।

वह सहर्ष अपने उपकारक के उपकार के लिए कृतज्ञता प्रकट करता है; वह अपने हितकर्ता को आदर और प्रेम की दृष्टि से देखता है।

यदि उसका बदला देना उसकी सामर्थ्य से बाहर हो, तो भी वह उसे अपने हृदय मे याद रखता है; वह जीवनपर्यन्त उसको नहीं भूलता।

उदार पुरुष का हाथ आकाश के मेघों के सदृश है जो कि पृथ्वी पर फल, फूल और वनस्पति की वृष्टि करते है, परन्तु कृतघ्न का हृदय वालू के निर्जल वन के सदृश है जो उस पर पड़नेवाली वर्षा को बड़े लोभ से हड़प कर जाता है, उसको अपनी छाती मे दबा लेता है, और कोई चीज़ भी पैदा नहीं करता।

अपने हितकर्ता से ईर्ष्या मत कर, और उसने तुझ पर जो उपकार किये है उनको मत छिपा;

क, यद्यपि उपकार करना उपकृत होने से अच्छा

है; यद्यपि दानशीलता से प्रशंसा होती है, फिर भी कृतज्ञता की नम्रता हृदय पर असर करती है, और ईश्वर और मनुष्य दोनों की दृष्टि में प्यारी है।

परन्तु अभिमानी का उपकार मत ले; स्वार्थी और लोभी-द्वारा उपकृत मत हो; क्योंकि अभिमानी सबके सामने अपने उपकार का ज़िक्र करके तुझे लज्जित करेगा; और लोभी का लोभ कभी शान्त न होगा। वह तुझसे सदा उपकार का बदला चाहता रहेगा

पाँचवाँ प्रकरण।

निष्कपटता।

ऐ तू जो कि सचाई के सद्गुणों पर मोहित है, और उसके रूप की सादगी पर आनन्द है, तू उसकी दृढ़ता से भक्त बना रह और उसे छोड़ मत, तेरे धर्म की दृढ़ता तेरे सिर पर यश का मुकुट पहनायेगी।

निष्कपट की जीभ उसके हृदय में गड़ी हुई है, उसके शब्दों में कपट और दम्भ की गन्ध भी नहीं।

वह मिथ्या भाषण से शर्माता और व्याकुल हो जाता है; परन्तु सत्य भाषण के समय उसकी आँख स्थिर रहती है।

वह मनुष्य की तरह अपने चरित्र के माहात्म्य को बनाये रखता है, वह छल और दम्भ से काम लेने में अपना अपमान समझता है।

उसका भीतर और बाहर एक समान है, वह कभी व्यामूढ़ नहीं होता; उसमें सत्य बोलने की निर्भीकता है, लेकिन झूठ बोलते हुए वह डरता है।

वह दम्भ की नीचता से बहुत परे है; उसके मुँह के शब्द उसके हृदय के विचार है।

इस पर भी वह दूरदर्शिता और दक्षता के साथ अपनी जिह्वा खोलता है; वह पहले सोचता है कि कौन सी बात सच्ची और ठीक है, और फिर के साथ बोलता है।

वह मित्रता से परामर्श देता है; वह निष्कपटता से झिड़कता है; और जो कुछ वह जीभ से कहता है उसे पूरा कर दिखाता है।

परन्तु दम्भी का हृदय उसकी छाती मे गुप्त रहता है। वह अपने शब्दो को बाहर से सत्य का वेप पहनाता है, परन्तु उसके अपने जीवन का उद्देश केवल धोखा देना है।

वह शोक मे हँसता और हर्ष में रोता है, और उसकी जिह्वा से निकले हुए शब्दों का कुछ अर्थ नहीं होता।

वह अन्धकार में छछूँदर की तरह काम करता है, और अपने को सुरक्षित समझता है, परन्तु उसकी भूल से उसके पाप-कर्म्म प्रकाश में आजाते है और रहस्य की यवनिका फट जाती है।

उसके दिन नित्य यन्त्रणा में व्यतीत होते है, उसकी जिह्वा और हृदय में सदा भेद रहता है।

वह सदा इसी यत्न में रहता कि अपने को

किसी प्रकार सत्यानुरागी प्रकट करे; वह सदा कपट के विचारों का आलिङ्गन करता है।

हे मूर्ख! अपने वास्तविक स्वरूप को छिपाने के लिए तू जितना यत्न करता है उसकी अपेक्षा थोड़ा यत्न तुझे वह बना सकता है जो कि तू अपने आपको प्रकट करना चाहता है; बुद्धिमान् तेरे दम्भ पर हँसते हैं, जब तेरे दुष्कर्मों का पर्दा उठ जायगा तो लोग तेरी ओर उँगली करके तुझे धिक्कारेंगे

सातवीं पुस्तक

धर्म्म ।

परमेश्वर केवल एक है। वह जगत् का रचयिता, स्रष्टा और नियन्ता है। वह सर्वशक्तिमान्, नित्य और अज्ञेय है।

सूर्य परमेश्वर नहीं यद्यपि वह उसकी श्रेष्ठतम प्रतिच्छाया है। वह अपनी दीप्ति से सारे संसार को उद्दीप्त करता है; उसका ताप पृथिवी की वनस्पतियों और जीवों को जीवन देता है; तू उसे एक सृष्ट पदार्थ, परमेश्वर का एक साधन समझ कर उसकी प्रशंसा कर, परन्तु उसका पूजन मत कर।

वह एक जो सर्वश्रेष्ठ, ज्ञानस्वरूप और अद्वितीय परोपकारक है, वही एक आराधना, उपासना, धन्यवाद और स्तुति के योग्य है।

उसने आकाशरूपी यवनिका को अपने हाथ

से फैलाया है, उसकी उँगली के सङ्केत से नक्षत्रों का मार्ग नियत हुआ है।

उसी ने सागर की सीमा नियत की है जिसके आगे वह नहीं जा सकता; वह आँधियों को कहता है 'ठहर जाओ' और वे ठहर जाती है।

वह पृथ्वी को हिलाता है और जातियाँ काँप उठती है, वह बिजली के तीर छोड़ता है और पापियों के पाप काँप उठते हैं।

उसकी आज्ञा से लोकों का जन्म होता है; और उसके हाथ झाड़ने से वे नष्ट हो जाते हैं।

"हे मनुष्य! सर्वशक्तिमान् की विभूति का सम्मान कर, उसके कोप को उत्तेजित मत कर जिससे तू कहीं नष्ट न हो जाय।"

परमेश्वर की दूरदर्शिता उसके सभी कार्यों के ऊपर है; वह अनन्त ज्ञान के साथ शासन और नियंत्रण करता है।

उसने जगत् के शासन के लिए नियम बना रक्खे हैं, उसने बड़ी अद्भुत रीति से सब भूतों में

उनका रूपान्तर किया है; और प्रत्येक भूत अपने स्वभाव से उस की इच्छा के अधीन है।

उसका मन सारे ज्ञान का उद्भव है; भविष्यत्काल के रहस्य उसे सब ज्ञात हैं।

तेरे हृदय के गुप्त विचारों को वह स्पष्ट देखता है; उसे तेरे सङ्कल्पों का उनके बनने से भी पहले ज्ञान है।

उसके भविष्यद् ज्ञान की दृष्टि में कोई भी बात आकस्मिक नहीं; उसकी दूरदृष्टि में कोई भी चीज़ नैमित्तिक नहीं।

उसके सभी मार्ग अद्भुत हैं; उसके सभी उपाय गहन हैं; उसके ज्ञान की रीति तेरी कल्पना से बाहर है।

"इसलिए उसके ज्ञान का पूरा पूरा सम्मान और आदर कर; और उसकी आज्ञा के सामने नम्र और विनीत-भाव से सिर झुका।"

परमेश्वर दयालु और हितकारी है, उसने प्रेम

और दया के भाव से प्रेरित होकर यह जगत् उत्पन्न किया है ।

उसका पुण्य प्रताप उसके सभी कार्यों मे सुस्पष्ट है, वह विशिष्टता का स्रोत और उत्कर्ष का केन्द्र है ।

उसके हाथ से बने हुए भूत उसकी पुण्य-शीलता का वर्णन करते है, और उनके सारे उपभोग उसका गुणानुवाद करते हैं, वह सौन्दर्य से उन्हे सुसज्जित करता, आहार से उनका पोषण करता, और आनन्द के साथ उनकी एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक रक्षा करता है ।

यदि हम आकाश की ओर आंखे उठावें तो उसका तेज वहां चमकता दिखाई देगा; यदि पृथ्वी पर दृष्टिपात करें तो वह उसके पुण्य-प्रताप से भरपूर दीखती है, पर्वत और घाटियां प्रसन्न होकर उसका स्तुतिगान कर रही है, खेत, नदियां और जङ्गल उसका गुणानुवाद कर रहे है ।

परन्तु हे मनुष्य ! तुझ पर उसने अपनी विशेष

कृपा की है, और सब प्राणियों में तेरी पदवी उच्च बनाई है।

उसने तुझे विचार-शक्ति दी है कि तू अपना शासन बनाये रक्खे; उसने तुझे भाषा दी है कि तू समाज में रह कर उन्नति करे; उसने तेरे मन को चिन्ता-शक्ति दी है कि तू उसकी सिद्धियों का चिन्तन और आराधन करे।

जगत्-पिता ने अपने आईनों में तेरे जीवन के लिए भी एक नियम बनाया है; तेरे कर्तव्य तेरे स्वभाव के अनुकूल नियत किये हैं; उसके नियम का पालन करना तेरे सुख का कारण है।

"हे मनुष्य! कृतज्ञता के गीतों के साथ उसके पुण्य-प्रताप का गुणगान कर, और उसके प्रेम के चमत्कारों पर एकान्त में विचार कर; तेरा हृदय कृतज्ञता और स्वीकार से भरपूर हो, तेरी जिह्वा से उसकी स्तुति और उपासना के शब्द निकलें; और तेरे कर्म उसके नियम के साथ तेरी प्रीति को प्रकट करें।"

परमेश्वर न्यायकारी और पुण्यमय है; वह सृष्टि का न्याय सचाई और निष्पक्षता से करता है।

क्या उसने अपने आईन दया और पुण्यशीलता से नहीं बनाये, और क्या वह उनका उल्लंघन करनेवालों को दण्ड न देगा?

हे अभिमानी मनुष्य! यह मत समझ कि चूँकि तेरे दण्ड में विलम्ब हुआ है इसलिए परमेश्वर का हाथ निर्बल है, और इस विचार से भी अपना जी न बहला कि वह तेरे पाप-कर्म्मों को नहीं देखता।

उसकी आँख सबके हृदयों के गुप्त रहस्यों को देखती है, और वह उनको सदा याद रखता है; वह न तो किसी की उच्च पदवी का लिहाज़ करता है और न किसी के व्यक्तित्व का ही।

उच्च और नीच, धनवान् और निर्धन, बुद्धिमान् और मूर्ख सबको, जीवात्मा के इस भौतिक शरीर को छोड़ जाने के उपरान्त, उनके कर्म्मों के अनुसार परमेश्वर फल देगा।

उस समय दुष्टात्मा काँपेंगे और डरेंगे, परन्तु धर्म्मात्मा उसके न्याय से हर्ष प्रकट करेंगे ।

"इसलिए हे मनुष्य ! तू परमेश्वर से सदा डरता रह, और उन रास्तों पर चल जो उसने तेरे लिए नियत किये हैं । दूरदर्शिता तुझे उपदेश दे, मिताचार तुझे मर्यादा में रक्खे, न्याय तेरे हाथ को मार्ग दिखाये, उदारता तेरे हृदय को उष्णता प्रदान करे, और जगदीश के प्रति कृतज्ञता तेरे अन्दर ईश-भक्ति का सञ्चार करे । इनसे तुझे इस लोक में सुख मिलेगा, और तत्पश्चात् स्वर्ग में परमानन्द की प्राप्ति होगी ।"

यही सच्ची जीवन-युक्ति—मानव-जीवन का सच्चा विधान है ।

मानव-जीवन का विधान।

दूसरा खण्ड।

एक भारतीय हस्तलेख से अनुवादित,
जो कि पहले खण्ड के हस्तलेख के
शीघ्र ही उपरान्त
उसी हाथ का लिखा हुआ मिला था।

एक चीन-प्रवासी अँगरेज़ सज्जन ने
अर्ल ऑव् चेस्टरफ़ील्ड के नाम
अपने दूसरे पत्र में लिख कर भेजा।

पूज्यपाद श्रीमान् अर्ल ऑव चेस्टरफ़ील्ड महोदय की सेवा में

पेकिङ्ग जनवरी १०. १७४९—५०

महामान्य !

जब मैं श्रीमानों की सेवा में पूर्वीय नीति-शास्त्र की पुस्तक का अनुवाद भेज चुका, तो एक मास उपरान्त इसी प्रकार का एक और हस्तलेख पा कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। इसका आकार, प्राचीनता, लिपि और अन्य आन्तरिक चिह्न इसे इसी लेखक की रचना सिद्ध करते हैं; पहली पुस्तक में मुझे जो त्रुटियां दिखाई देती थीं वे इस दूसरे हस्तलेख में पूरी हो गई हैं।

चीनी भाषा में जब मैंने पहले पहल इसका अनुवाद पढ़ा तो फ़ौरन इसके अँगरेज़ी अनुवाद का ख़याल आया, और जब तक उसे समाप्त न कर लिया, मुझे चैन न मिला। फिर यह विचार हुआ कि इसे जितना शीघ्र श्रीमानों की सेवा में

भेजूँ उतना ही अच्छा और मेरे यश का कारण होगा। मुझे यह कहने का प्रयोजन नहीं कि विचार की शक्ति, शैली की श्रेष्ठता और अनेक दूसरी बातों से यह हस्तलेख भी उसी ऋषि की रचना मालूम होती है जिसने कि पहले को लिखा था। इसका मज़मून इस अनुमान की और भी पुष्टि करता है।

यदि मुझे इस बात का गर्व न होता कि प्रथम खण्ड के अनुवाद को श्रीमानों ने पसन्द फ़र्माया है, तो मुझे इस द्वितीय खण्ड के अनुवाद की तैयारी और फिर इसे आपकी सेवा में भेजने का इतना शौक़ कदापि न होता। मैं इस पुस्तक के गुणों को जानता हूँ, और यह भी जानता हूँ कि श्रीमान् ऐसे गुणों के कैसे ग्राहक है, इसलिए इस विषय में किसी तरह का सन्देह करना एक प्रकार की निर्लज्जता होगी।

भवदीय विनीत सेवक,

....

पहली पुस्तक ।

मनुष्य की साधारण दशा ।

पहला प्रकरण ।

मानव-शरीर और उसकी रचना ।

हे मनुष्य ! तू निर्बल और अज्ञानी है। हे मिट्टी की सन्तान ! नम्र बन जैसा कि तुझे बनना चाहिए। क्या तू अपने विचारों को अनन्त ज्ञान के भण्डार तक ले जाना चाहता है ? क्या तू अपने सामने सर्वशक्तिमान् का प्रकाश देखना चाहता है ? अपने शरीर पर विचार कर।

तू बड़ी अद्भुत और भयार्त रीति से बना हुआ है; इसलिए अपने स्रष्टा का भय के साथ गुणगान कर, और उसके सामने सम्मान के साथ आनन्द मना।

सब जीवों में अकेला तू ही क्यों सीधा चलने-वाला बनाया गया है ? इसलिए कि तू स्रष्टा के

कार्यो को देखे ! उन्हें क्यों देखे ? ताकि तू उनकी प्रशंसा करे ! प्रशंसा किसलिए करे ? ताकि तू उनके और अपने निर्माता का पूजन करे !

अभिज्ञता तुझ अकेले को क्यों और कहाँ से दी गई है ?

मांस सोच नहीं सकता है; हड्डियों में तर्क-शक्ति नहीं; सिंह नहीं जानता कि कीड़े-मकोड़े उसे खा जाँयगे, बकरी को मालूम नहीं कि वह मारने के लिए पाली जा रही है ।

जो कुछ तू देखता है उसके विसदृश तुझे कुछ और भी दिया गया है; जो पदार्थ तेरी इन्द्रियों का विषय है वह उनसे भी श्रेष्ठतर वस्तु है । देख ! वह क्या पदार्थ है ?

उसके निकल जाने पर भी तेरा शरीर पूर्ण रहता है, इसलिए वह इसका अंश नहीं; वह अभौतिक है, इसी लिए वह अनादि है; वह कर्म करने में स्वतन्त्र है, अतः अपने कर्मों के लिए उत्तरदाता है ।

यद्यपि गधे के दाँत चारा काटते हैं पर क्या वह आहार के लाभों को जानता है? यद्यपि घड़ियाल की रीढ़ की हड्डी तेरी तरह सीधी है पर क्या वह सीधा खड़ा होता है?

परमेश्वर ने तुझे वैसे ही बनाया है जैसे उसने अन्य जीवों को बनाया है; उन सबके बाद तुझको बनाया गया; उन सब पर तुझको श्रेष्ठता और अधिकार दिया गया; और अपने श्वास से उसने तुझे ज्ञान दिया है।

इसलिए तू अपने आपको सारी सृष्टि का गर्व, और प्रकृति को अध्यात्म-तत्त्व के साथ जोड़ने-वाली शृङ्खला समझ; अपने अन्दर स्वयं परमेश्वर का अंश देख, अपने माहात्म्य को मत भूल, पाप और नीचता की ओर पग मत बढ़ा।

सर्प की पूँछ में भय किसने रक्खा? घोड़े की गर्दन को गर्जना से किसने परिवेष्टित किया? उसी सत्ता ने जिसने तुझे पहले का सिर कुचलने और दूसरे को सधा कर उससे काम लेने की शिक्षा दी।

दूसरा प्रकरण ।

इन्द्रियों का उपयोग ।

अपनी काया पर अभिमान मत कर कि यह पहले बनाई गई थी; अपने मस्तिष्क पर भी गर्व न कर कि उसमें तेरी आत्मा निवास करती है। क्या घर की दीवारों से ज़ियादा घर का स्वामी आदरणीय नहीं !

बीज बोने के पूर्व भूमि को हल चला कर जोतना ज़रूरी है, बर्तन बना सकने के पहले कुम्हार के लिए अपना आवा बनाना आवश्यक है।

जिस प्रकार आकाश का श्वास सागर के जल से कहता है "अपनी लहरों को इस ओर से बहाओ, उनका महावेग इस सीमा से ऊपर मत बढ़ने दो;" इसी प्रकार हे मनुष्य ! तेरी आत्मा तेरे शरीर को अपनी इच्छा के अनुसार चलाने और उस की उच्छृङ्खलता को दबावे।

तेरी आत्मा तेरे शरीर की स्वामिनी है; इसकी

अधीनस्थ प्रजा को इसके विरुद्ध सिर मत उठाने दे।

तेरा शरीर माने मिट्टी का गोला है; तेरी हड्डियां उसके आधारभूत खम्भे हैं।

जिस प्रकार सागर से झरने पैदा होते है जिनका जल नदियों के मार्ग से फिर उसी सागर में जा पहुँचता है; उसी प्रकार तेरा जीवन हृदय से निकल कर बाहर की ओर जाता है, और फिर लौट कर उसी में चला जाता है।

क्या इन दोनों की गति सदा नहीं बनी रहती? देखो, उसी भगवान् ने उनकी व्यवस्था की है।

क्या तेरी नाक सुगन्धियों के लिए प्रणाली नहीं? क्या तेरा मुँह स्वादिष्ट भोजनों के लिए द्वार नहीं? फिर भी तू जानता है कि चिरकाल तक सूँघने से सुगन्ध भी अप्रिय हो जाती है, और स्वादिष्ट भोजन खाते रहने से क्षुधा नष्ट हो जाती है।

क्या तेरी आंखें तेरे लिए चौकीदार का काम

नहीं करतीं ? फिर भी वे बहुत बार भ्रम से यथार्थ की पहचान करने में असमर्थ होती है।

अपनी आत्मा को मर्यादा का उल्लङ्घन मत करने दे; इसे अपनी भलाई की ओर ध्यान देना सिखला; इससे तेरी इन्द्रियाँ तुझे सदा सत्य ज्ञान पहुँचाती रहेंगी।

क्या तेरा हाथ एक अद्भुत चीज़ नहीं ? क्या सारी सृष्टि में कोई वस्तु इसके सदृश है ? वह तुझे इसलिए दिया गया है कि तू इससे अपने भाइयों की सहायता करे।

सकल सजीव वस्तुओं मे तू ही अकेला क्यों लज्जाशील बनाया गया है ? संसार को तेरे चेहरे से तेरी लज्जा का ज्ञान हो जाता है, इसलिए कोई लज्जाजनक काम मत कर।

भय और शंका तेरे मुख-मण्डल के तेज को क्यों नष्ट कर देते हैं ? पाप से दूर रह, फिर भय तुझ तक नहीं पहुँच सकेगा, और शंका तुझे भीरुता मालूम होगी।

सोते समय केवल तुझे ही क्यों स्वप्न दीखते हैं ? तू उनका सम्मान कर, क्योंकि वे परमेश्वर की ओर से है ।

हे मनुष्य ! बोलने की शक्ति केवल तुझे ही मिली है; इस यशस्कर अधिकार पर विस्मित हो और उस अद्वितीय दाता की यथोचित स्तुति कर, अपने बच्चों को बुद्धिमत्ता सिखा, और अपनी सन्तान को ईश-भक्ति की शिक्षा दे ।

तीसरा प्रकरण ।

मनुष्य की आत्मा, उसका मूल, और उसके विकार ।

हे मनुष्य ! शरीर के सुख तन्दुरुस्ती, बल और सुडौल अङ्ग हैं, इन सबमें प्रधान तन्दुरुस्ती है । शरीर के लिए जैसे तन्दुरुस्ती है वैसे ही आत्मा के लिए सत्यता है ।

यह बात अतिशय निश्चित और सत्य है कि

तुझमें एक आत्मा है; नम्र बन, इस कृपा के लिए कृतज्ञ हो, परन्तु इसका पूर्ण ज्ञान लाभ करने का यत्न मत कर क्योंकि यह अचिन्त्य है।

चिन्ता, बुद्धि, तर्क और इच्छा को आत्मा मत कह, ये उसकी क्रियायें है; उसका तत्त्व नहीं।

तू अपनी आत्मा को आकाश पर मत चढ़ा जिससे लोग तुझसे घृणा न करें; उन लोगो की तरह मत बन जो ऊपर चढ कर नीचे गिरते है, न इसे इतना भ्रष्ट कर कि इसमें और पशुओं की बुद्धि में कोई भेद न रहे, और न तू घोड़े और ख़च्चर के सदृश बन जो बुद्धिशून्य है।

इसकी तलाश इसकी कार्यशक्तियो से कर, इसके सद्गुणों से इसे पहचान; ये गुण संख्या में तेरे सिर के बालों से भी अधिक है; आकाश के तारे सख्या में इनसे नहीं बढ़ सकते।

अरब-देश-निवासियों की तरह मत समझ कि एक ही आत्मा सब मनुष्यों में बाँटी गई है और न मिस्र देशवालों की तरह यह विश्वास कर कि

एक मनुष्य के अन्दर अनेक आत्मायें है। याद रख कि जिस प्रकार तेरा हृदय एक है वैसे ही तेरी आत्मा भी एक है।

क्या धूप से मिट्टी सख्त नहीं हो जाती? क्या इससे मोम नर्म नहीं हो जाता? जिस प्रकार एक ही सूर्य ये दोनों काम करता है, उसी प्रकार एक ही आत्मा विपरीत सङ्कल्प कर सकती है।

अन्धकार की काली यवनिका के सामने जिस प्रकार चन्द्र अपनी प्रकृति को नहीं बदलता वैसे ही आत्मा मूर्ख के मन में भी पूर्ण बनी रहती है।

आत्मा अविनाशी है, उसमें कभी परिवर्तन नहीं होता, वह सबमें एक समान है; तन्दुरुस्ती उसके रूप-लावण्य की शोभा बढ़ा देती है, और परिश्रम उसके मुखमण्डल पर बुद्धिमत्ता का तेल चुपड़ता है।

यद्यपि वह तेरे बाद भी रहेगी परन्तु यह मत समझ कि वह तुझसे पहले पैदा हुई थी; वह तेरे शरीर के साथ ही पैदा की गई थी।

यदि तू सद्गुणों के कारण उच्च होता तो भी न्याय तुझे आत्मा न देता । न तू दया से ही इसे प्राप्त कर सकता चाहे तू पाप के कारण अति कुरूप होता । ये सब तेरे हैं और तू इनके लिए उत्तर-दाता है ।

मत समझ कि मृत्यु तुझे ईश्वरीय परीक्षा से बचा सकती है, और न यही ख़याल कर कि दुर्जनता तुझे पृच्छा से छिपा सकती है । जिस जगदीश्वर ने तुझे बनाया है और तू नहीं जानता कि किस वस्तु से बनाया है, क्या वह तुझे फिर कल्पनातीत ऊँचाई तक नहीं ले जा सकता ?

क्या कुक्कुट आधी रात को नहीं जानता ? क्या वह अपने शब्द से तुझे प्रभात के आगमन की सूचना नहीं देता ? क्या कुत्ता अपने स्वामी के पैरों की आहट को नहीं जानता ? क्या घायल बकरा उस बूटी के पास दौड़ा नहीं जाता जिससे उसका अच्छा हो जाता है ? फिर भी जब ये मर जाते

है तो इनकी आत्मा मिट्टी में मिल जाती है, केवल तेरी आत्मा ही बची रहती है।

तू इन पशुओं की इन्द्रियों से इसलिए ईर्ष्या मत कर कि वे तेरी इन्द्रियों से तीक्ष्ण है, याद रख कि उत्तम पदार्थों को अपने क़ब्ज़े में रखने से फ़ायदा नहीं, बल्कि उनसे काम लेना जानने से फ़ायदा है।

यदि तेरे कान बारहसिंगे के कानों के समान तेज़ होते; या तेरी आंख गरुड़ की आंख के समान तीक्ष्ण और प्रबल होती, या तेरी नाक गन्ध सूँघने में शिकारी कुत्ते की नाक के समान होती, या बन्दर जैसी चखने की और कछुए ऐसी छूने की शक्ति तुझमें होती, तो भी तर्क-बुद्धि के बिना ये सब चीजे तुझे क्या काम देतीं ? क्या ये सब अन्य शक्तियों की तरह नष्ट नहीं हो जाती हैं ?

क्या इन जीवों में से किसी एक में भी बोलने की शक्ति है ? क्या इनमें से कोई भी तुझे यह कह सकता है "यह काम मैंने इस कारण किया है ?"

बुद्धिमान् के होठ रत्नकोष्ट के दरवाज़ों के सदृश

हैं; ज्यों ही वे खुलते हैं तेरे सामने मणि-मुक्ता का ढेर लग जाता है।

उचित समय पर कहे हुए बुद्धिमत्ता के वाक्य ऐसे हे मानो चांदी की क्यारियों में स्वर्ण के पौधे लगाये हुए हों।

क्या तू अपनी आत्मा के विषय में कोई बहुत उच्च धारणा बना सकता है? क्या उसकी अतिशय प्रशंसा हो सकती है? यह उसी की प्रतिच्छाया है जिसने यह दी है।

तू इसके माहात्म्य को सदा याद रख; मत भूल कि कितनी बड़ी क्षमता पर तुझे अधिकार दिया गया है।

जिस चीज़ से फ़ायदा पहुँचता है उससे क्षति भी हो सकती है; तू इसे भलाई के रास्ते पर चला। यह मत समझ कि तू अपनी आत्मा को जनसमूह में खो सकता है और न यह ख़याल कर कि तू इसे एकान्त कोठरी में दबा सकता है, कर्म से इसे प्रसन्नता ेता है; और इसको इससे रोकना कठिन है।

उसकी गति नित्य है, उसके यत्न सार्वत्रिक है; उसकी चपलता और फुर्ती को रोकना कठिन है; वह आंख की झपक में पृथ्वी के दूसरे किनारे पर जा पहुँचती है; यदि कोई वस्तु नक्षत्र-जगत् के उस पार हो तो भी उसकी आंख उसे देख लेती है।

अन्वेपण मे उसे आनन्द आता है; जिस प्रकार पर्यटक जल की तलाश मे जलती हुई मरुस्थली को तय करता है उसी प्रकार आत्मा ज्ञान-पिपासा से व्याकुल होती है।

तू उसकी रखवाली कर क्योंकि वह साहसिक और प्रमत्त है; उसे क़ाबू मे रख, क्योंकि वह अव्य-वस्थित है; उसे ठीक कर, क्योकि वह अत्याचारी है; वह पानी से अधिक पतली, मोम से अधिक नर्म, और पवन से ज़ियादा दबनेवाली है, तो फिर क्या कोई ऐसी चीज़ है जो उसे बांध सके ?

अविवेकी मनुष्य के तन में आत्मा ऐसी है जैसी उन्मत्त के हाथ मे तलवार।

उसके अन्वेपण का उद्देश सचाई है; इसके

लिए उसके पास तर्क और अनुभवरूपी दो साधन हैं; परन्तु क्या ये निर्बल, अनिश्चित और भ्रान्ति-जनक नहीं ? फिर बताओ वह किस प्रकार उसे प्राप्त कर सकती है ?

लोकमत सचाई का कोई प्रमाण नहीं; क्योंकि मनुष्यों का प्रधानांश मूर्ख है।

अपने आपकी उपलब्धि; अपने स्रष्टा का ज्ञान; और उस उपासना का बोध जो कि उसके प्रति तेरा कर्तव्य है; क्या ये तेरे सामने स्पष्ट नहीं ? और देख ! और कौन सी चीज़ है जिसके निश्चयात्मक ज्ञान की मनुष्य को अधिक आवश्यकता है ?

चौथा प्रकरण।

मनुष्य-जीवन की अवधि और उसके उपयोग।

जैसे प्रातःकाल का आलोक चण्डूल को; जैसे सायङ्काल का अन्धकार उल्लू को; जैसे मधु मक्खी

को, या जैसे शव गिद्ध को प्रिय है वैसे ही मनुष्य के हृदय को जीवन प्यारा है ।

यद्यपि यह चमकीला है पर इससे चकाचौंध नहीं होती; यद्यपि यह अँधेरा है पर इससे अप्रसन्नता नहीं होती; यद्यपि यह मधुर है पर इससे मुँह नहीं फिरता; यद्यपि यह भ्रष्ट है पर यह निषेध नहीं करता; फिर भी कौन ऐसा है जो इसके वास्तविक मूल्य को जानता है ?

जीवन की उतनी क़दर कर जितनी क़दर कि इसकी होनी चाहिए; और तू बुद्धिमत्ता के उच्च शिखर के निकट पहुँच जायगा ।

मूर्खों की तरह यह मत समझ कि इससे अधिक मूल्यवान् और कोई वस्तु नहीं; और दिखलावे के बुद्धिमानों के साथ मिल कर उसे एक तिरस्कार के योग्य चीज़ न समझ; इससे अपने हितार्थ प्रेम मत कर, बल्कि इससे इसलिए प्रेम कर कि इसके द्वारा औरों को फ़ायदा पहुँच सकता है ।

स्वर्ण द्वारा तू जीवन को ख़रीद नहीं सकता; उसके बीते हुए क्षण रत्नों के ढेर देने पर भी वापस नहीं मिल सकते; इसलिए वर्तमान और भविष्यत् काल को पुण्य कार्यों में लगा।

यह मत कह कि 'मेरा न उत्पन्न होना ही अच्छा था,' या 'यदि मैं उत्पन्न हुआ था तो मेरा बाल्यावस्था में ही मर जाना भला था;' न अपने स्रष्टा से यह प्रश्न कर कि "यदि मेरा जन्म न होता तो संसार में कौन सी ख़राबी हो जाती ?" भला करना तेरे हाथ में है ; भलाई का अभाव बुराई है; यदि तेरा प्रश्न न्यायसंगत हो तो यह तुझे ही अपराधी ठहराता है।

यदि मछली को यह मालूम हो कि रोटी के टुकड़े के नीचे काँटा है तो क्या वह इसे खायगी ? यदि सिंह को यह मालूम हो कि मेरे सामने फन्दा बिछा हुआ है तो क्या वह वहाँ पैर रक्खेगा ? इसी तरह यदि आत्मा इस भौतिक शरीर के साथ ही नाश होनेवाली होती तो मनुष्य जीवन की कभी

कामना न करता; दयालु भगवान् उसे पैदा भी न करता; इसलिए यह जान कि मृत्यु के पश्चात् भी तू जीवित रहेगा।

जिस प्रकार पिंजरे मे बंद पक्षी अपने शरीर को उसकी दीवारों के साथ टकरा कर नष्ट नहीं कर डालता, उसी तरह तू भी अपनी वर्तमान अवस्था से निकल भागने का यत्न न कर, प्रत्युत यह समझ कि तेरे भाग्य में यही था, और इसी पर सन्तुष्ट रह।

यद्यपि इसके मार्ग ख़राब और कुत्सित है, पर वे क्लेशदायक नहीं, अपने आप को सबके लिए ठीक कर ले और जैसा अवसर हो, भुगत ले, जहाँ ख़राबी सबसे कम मालूम होती हो वहाँ सबसे ज्यादा सङ्कट का सन्देह कर।

पयाल के बिछौने पर तू निश्चिन्त सो सकता हैं, परन्तु जब तू फूलो की शय्या पर सोये तो काँटों का ख़याल रख।

पापमय जीवन से पुण्यमय मृत्यु अच्छी है,

इसलिए जितनी देर तू जी सकता है उतनी देर नहीं, बल्कि जितनी देर तुझे जीना चाहिए उतनी देर जीने का यत्न कर; दूसरों के लिए तेरा जीवन जब तक तेरी मृत्यु की अपेक्षा अधिक मूल्यवान् है, तब तक उसकी रक्षा करना तेरा धर्म्म है।

मूर्खों की तरह अपने जीवन के छोटा होने की शिकायत मत कर; याद रख कि ज्यों ज्यों तेरी आयु घटती है त्यों त्यों तेरी चिन्तायें भी कम होती जाती है।

अपनी जीवन-अवधि में से उसके निरर्थक भागों को निकाल दे, और फिर देख बाक़ी क्या रह जाता है? अपना शैशव-काल, लड़कपन, निद्रा, अपने मूर्खता के दिन, और अपने रोग के दिन ये सब अपनी आयु में से निकाल दे और फिर देख कि बाक़ी कितना थोड़ा समय तूने उपयोगी कार्यों में व्यतीत किया है।

जिसने तुझे जीवनरूपी दान दिया है उसने ..छोटा करके इसके आनन्द को बढा दिया है; लम्बी

आयु तेरे किस काम आ सकती थी ? क्या तू और ज्यादा पाप करने के लिए अवसर लेना चाहता है ? रह गई पुण्य-कर्मों की बात, सो जिसने तेरी आयु की अवधि नियत की है क्या वह इसके फलों से सन्तुष्ट न होगा ?

हे शोकाकुल मनुष्य, तू किसलिए चिरकाल तक जीना चाहता है ? क्या साँस लेने, खाने-पीने और दुनिया की बहार देखने के लिए ? यह सब बातें तो तू पहले ही बहुत बार कर चुका है। क्या बार बार वही काम करने में तेरी तबीयत नहीं घबराती ? क्या यह सर्वथा प्रयोजनाधिक नहीं ?

बुद्धिमत्ता और सद्गुणों में उन्नति करने के लिए क्या तू दीर्घ जीवन चाहता है ? हा हन्त ! तू और क्या जानना चाहता है ? या तुझे और कौन सिखायगा ? जो कुछ थोड़ा सा तेरे पास है उसका भी तू दुरुपयोग करता है; इसलिए इस बात की शिकायत मत कर कि मुझे और नहीं मिला।

ज्ञान की कमी पर खेद मत कर, यह तेरे साथ

ही नष्ट हो जायगा; इस लोक मे निष्कपट जीवन व्यतीत कर, परलोक मे तुझे ज्ञान और बुद्धि मिलेगी।

तू कौए से मत कह "तू अपने प्रभु की आयु सात बार क्यो गिनता है?" और न हिरन के बच्चे से यह कह कि "तेरी आंखे मेरी सन्तान की सौ पीढियां क्यों देखेंगी?" क्या जीवन के दुरुपयोग में वे तेरा मुकाबला कर सकते हैं? क्या वे उच्छृङ्खल है? क्या वे निर्दय हैं? क्या वे कृतघ्न है? प्रत्युत तू उनसे यह सीख कि निष्पाप जीवन और सरल व्यवहार के द्वारा ही अच्छी लम्बी आयु प्राप्त हो सकती है।

क्या तू इन जीवों की अपेक्षा उत्तमतर रीति से अपना जीवन व्यतीत करना जानता है? तब तो तेरे लिए थोड़ी आयु ही पर्याप्त है।

जो मनुष्य ससार को दास बनाने का यत्न कर सकता है जब कि वह जानता है कि वह अपने त्या।।. का आनन्द केवल थोड़े से समय के लिए

ही उठा सकता है, वह यदि अमर होता तो न जाने और क्या कुछ न कर डालता।

तुझे पर्य्याप्त जीवन मिला है पर तू इसे काफ़ी नहीं समझता; हे मनुष्य ! तुझे इसकी आवश्यकता नहीं, पर तू व्ययशील है; तू इसे इस प्रकार व्यय करता है मानों तेरे पास इसका काफ़ी से ज़ियादा भण्डार है; फिर भी तू रोता है कि गया वक़्त फिर मेरे पास क्यों नहीं लौट आता।

याद रख कि मनुष्य प्रचुर सम्पत्ति से नहीं प्रत्युत मितव्ययिता से धनवान् बनता है।

बुद्धिमान् जीवन के पहले घण्टे से ही अपना नियत कार्य करने लगता है, परन्तु मूर्ख सदा आरम्भ ही करता रहता है।

पहले तू धनोपार्जन का यत्न मत कर और यह न समझ कि बाद में मैं इससे आनन्द प्राप्त करूँगा, जो मनुष्य वर्तमान काल को नष्ट करता है वह मानों अपनी सारी सम्पत्ति का नाश करता है, जिस प्रकार बाण योद्धा के हृदय से अकस्मात् पार

हो जाता है उसी प्रकार उसका जीवन एकाएक उससे छिन जाता है।

तो फिर जीवन क्या है जिसके लिए मनुष्य इतनी कामना करता है? श्वास लेना क्या चीज़ है जिसके लिए वह इतना लालच करता है?

क्या यह भूलो का स्थल नहीं? क्या यह अनिष्टपातों की माला नहीं? क्या यह दोनों ओर से जुड़ी हुई पापो की श्रृङ्खला नहीं? इसके आरम्भ में अज्ञान, मध्य मे पीड़ा और अन्त में सन्ताप है।

जैसे पानी की एक लहर दूसरी को ढकेलती है जहां तक कि दोनों पीछे आनेवाली लहर के साथ मिल जाती है, उसी प्रकार मनुष्य-जीवन के अनिष्ट है; बडा और वर्तमान छोटे और अतीत को निगल जाता है, हमारे भय सच्चे अनिष्ट है; हम असम्भव बातों की प्रतीक्षा करते है।

मूर्ख अनित्यों की तरह डरते है; और नित्यों की तरह कामना करते है!

आयु के किस भाग के सदा बने रहने की हम कामना करते हैं ? क्या हमें नित्य यौवन की अभिलाषा है ? क्या हम अत्याचार, व्यभिचार और दुःसाहस से प्रेम रख सकते है ? क्या बुढ़ापा अच्छा मालूम होता है ? तो क्या हम निर्बलताओं पर आसक्त है ?

कहा जाता है कि सफ़ेद बालों का सम्मान होता है, और बुढापा आदर की दृष्टि से देखा जाता है; परन्तु सद्गुण यौवन की लालिमा को आदरणीय बना देते हैं; इनके बिना बुढ़ापा मनुष्य के माथे की अपेक्षा उसकी आत्मा पर अधिक झुर्रियाँ पैदा कर देता है।

क्या बूढ़े का सम्मान इसलिए होता है कि वह उच्छृङ्खलता से घृणा करता है ? यह न्यांय नही, क्योंकि बुढापा तो पाप और विलास को घृणा के योग्य नहीं समझता, परन्तु स्वयं पाप और विलास बुढापे से घृणा करते है।

तू युवावस्था में धर्म्मशील बन, तब वृद्धावस्था में तेरा सम्मान होगा।

दूसरी पुस्तक।

मनुष्य

उसकी निर्बलतायें और उनका परिणाम।

पहला प्रकरण।

वृथा गर्व।

मनुष्य का मन बड़ा ही अस्थिर है; असंयम उसे जिधर चाहे ले जाता है; निराशा उसे बहुत व्याकुल करती है; और भय कहता है "देख, मैं यहाँ बे-खटके बैठा हूँ;" परन्तु वृथा गर्व इन सबसे बढ़कर है।

इसलिए मानुषी अवस्था की विपत्तियों पर मत रो, प्रत्युत उसकी मूर्खताओं और दुष्कृतियों पर हँस। वृथा गर्व करनेवाले मनुष्य के हाथ में जीवन ऐसा है जैसे स्वप्न की छाया।

वीर पुरुष, जो मानव-समाज में अत्युत्तम समझा जाता है, इस निर्बलता के एक बुद्बुदे के

सिवा और क्या है ? जनता अस्थिर और कृतघ्न है। फिर मूर्खों के लिए बुद्धिमान् अपने आपको जोखिम में क्यों डाले ?

जो मनुष्य अपने वर्तमान व्यापारों की उपेक्षा करता है और बड़ाई की कल्पनायें करता रहता है, वह मानों पवन पर निर्वाह करता है और उसकी रोटी दूसरे खाते हैं।

अपनी वर्तमान स्थिति के अनुरूप कर्म्म कर, फिर तुझे अपने से उच्च मनुष्यों में लज्जित न होना पड़ेगा।

वृथा गर्व से बढ़ कर और कौनसी चीज़ ऐसी है जो मनुष्य की आँखों पर पट्टी बाँधती, और उसकी वास्तविक अवस्था को उससे छिपाती है ? देख, जब तू अपने आपको नहीं देखता, तब दूसरे बहुत अच्छी तरह तेरे गुप्त रहस्यों को देखते हैं।

जिस प्रकार पोस्त का फूल देखने में सुन्दर और उज्ज्वल होने पर भी सुगन्धहीन और निष्प्रयोजन होता है वैसे ही वह मनुष्य है जो कोई उत्तम गुण

न होने पर भी अपने आपको सर्वश्रेष्ठ और परम बुद्धिमान् समझता है।

वृथाभिमानी का हृदय ऊपर से शान्त दिखाई देने पर भी भीतर से अशान्त रहता है, उसकी चिन्तायें उसके सुखों से अधिक होती है।

उसकी व्यग्रता उसकी हड्डियों तक परिमित नहीं रहती; उसका समाधि-मन्दिर भी उसे छिपा नहीं सकता; वह अपने विचार अपनी सत्ता के भी परे तक फैलाता है; वह कहता है कि मेरे जाने के बाद मेरी प्रशंसा करो; लेकिन जो उसे वचन देता है, वह उसे धोखा देता है।

जो मनुष्य यह आशा करता है कि भूमि के नीचे क़ब्र में भी मेरी प्रशंसा के शब्द मुझे सुनाई दे, वह उस मनुष्य के सदृश है जो अपने जीते जी अपनी स्त्री से अपनी मृत्यु के पश्चात् विधवा रहने की ताकीद करके अपना मन बहलाता है।

जब तक तू जीवित है अच्छे कर्म कर; और इस बात का कुछ याल न कर कि लोग क्या कहते

है; जिस प्रशंसा का तू पात्र है उसी पर सन्तुष्ट रह, और बाद को तेरी सन्तान इसे सुन कर प्रसन्न होगी।

जैसे तितली अपने सुन्दर पङ्खों को नहीं देख सकती; जैसे चमेली अपनी मधुर सुगन्ध का अनुभव स्वयं नहीं कर सकती; ठीक इसी तरह वह मनुष्य है जो बांका बन कर रहता है और दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करना चाहता है।

वह कहता है कि सुनहली पोशाक पहनने से क्या लाभ यदि कोई मनुष्य उसे देखता ही नहीं, नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन खाने से क्या फ़ायदा यदि संसार को इस बात का पता ही न लगे? तू नङ्गे के तन को ढक और भूखे के पेट को भर, फिर तेरी प्रशंसा होगी, और तू अनुभव करेगा कि मैं इसका पात्र हूँ।

तू प्रत्येक व्यक्ति की वृथा प्रशंसा क्यों करता है? तू जानता है कि जब वह इसी प्रकार-तेरी व्यर्थ प्रशंसा करता है तो तू उसकी कुछ भी परवा नहीं

करता। झूठी श्लाघा करनेवाला जानता है कि यह तुझ से झूठ बकता है, फिर भी उसे निश्चय है कि इस श्लाघा के लिए तू उसे धन्यवाद देगा। सरलता से बात कह और तू शिक्षा की बातें सुनेगा।

वृथाभिमानी अपना ही ज़िक्र करके ख़ुश होता है, परन्तु वह नहीं जानता कि दूसरे इसे सुनना पसन्द नहीं करते।

यदि उसने कोई प्रशंसनीय कार्य किया है; यदि उसमें कोई प्रशंसनीय गुण है, तो वह इसे विघोषित करके ही प्रसन्न होता है; जब कोई इसका ज़िक्र उससे करता है तो वह बहुत गर्व करता है, ऐसे पुरुष की कामना हार जाती है; लोग यह नहीं कहते, "देखो, उसने यह काम किया है," या "उसमे यह गुण है", प्रत्युत वे यह कहते है "देखो, उसको इसका कितना गर्व है"।

मनुष्य का मन एक-दम बहुत सी बातों पर ध्यान नहीं दे सकता, जो दिखलावे पर ध्यान

देता है वह सत्य से हाथ धो लेता है; वह बुद्बुदों को पकड़ने दौड़ता है पर वे इसकी पहुँच से बाहर हैं; जिन बातों से उसका सम्मान बढ़ सकता है उन्हें वह पैरों तले रौंदता है।

दूसरा प्रकरण।

चलचित्तता।

हे मनुष्य! प्रकृति तुझे चलचित्त होने के लिए बाध्य करती है, इसलिए तू हर वक्त चौकन्ना रह। तू माता के पेट से ही अस्थिर और चलायमान है; तू अपने पिता के वीर्य से ही परिवर्तनशील है, फिर तू दृढ़ कैसे हो सकता है।

जिन्होंने तुझे शरीर दिया है उन्होंने तुझे निर्बलता दी है; परन्तु जिसने तुझे आत्मा दी है उसने तुझे दृढ मति भी दी है, इसका उपयोग कर और तू बुद्धिमान् बन जायगा; बुद्धिमान् बन और तू सुखी रहेगा।

जो मनुष्य अच्छे कर्म करता है उसे इनका अभिमान नहीं करना चाहिए, क्योंकि ये उसकी इच्छा से नहीं।

ये किसी बाहर आवेग से पैदा होते हैं; ये किसी अनिश्चित कारण से उत्पन्न होते है, इनका विचार दैवगति से पैदा होता है, और इनका किसी और चीज़ पर ही अवलम्ब है। इसलिए प्रशंसा के पात्र दैवगति और ये है।

कर्म करने के सङ्कल्प में अनिश्चय से सदा बचता रह; उनको करते समय चलचित्तता को विघ्न मत डालने दे; इससे तू अपनी प्रकृति की दो बडी निर्बलताओं को जीत लेगा।

दो विपरीत कार्यों के करने से बढ़कर तर्क के लिए और लज्जाजनक बात कौनसी हो सकती है? और इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए मन की स्थिरता से बढ़कर और क्या चीज़ हो सकती है?

चलचित्त व्यक्ति अनुभव करता है कि मैं बदलता रहता हूँ, परन्तु वह इसका कारण नहीं जानता,

वह देखता है कि मैं अपने आपसे बच रहा हूँ परन्तु वह नहीं समझता कि क्यों बच रहा हूँ; तू सत्य में अस्थिर मत बन, फिर लोग तुझ पर भरोसा करेंगे।

अपनी क्रिया को किसी नियम या सिद्धान्त के अधीन कर दे; और उसका कभी उल्लङ्घन न कर। पहले इस बात का भलीभाँति निश्चय कर ले कि तेरे सिद्धान्त सच्चे हैं, फिर उन पर दृढ़ बना रह।

इससे तेरे मनोविकार तुझ पर शासन न करने पायेंगे; इस प्रकार तेरे मन की स्थिरता तुझमें तेरे सद्गुणों को बनाये रक्खेगी, और विपत्ति को तेरे घर से मार भगायेगी। चिन्ता और निराशा तेरे निवास-स्थान का मार्ग भी न जानेंगी।

किसी में बुराई का सन्देह मत कर जब तक कि तू उसे देख न ले; और जब तू उसे देख ले तो फिर इसे भूल मत।

जो मनुष्य एक बार शत्रु बन चुका हो, वह

फिर तेरा मित्र कभी न बनेगा; क्योंकि मनुष्य अपने दोषों को दूर नहीं करता।

जिस मनुष्य का जीवन किसी नियम के अधीन नहीं उसके कर्म सच्चे कैसे हो सकते हैं? जिस कर्म का आधार न्याय और बुद्धि न हो वह कभी न्याय-सगत नहीं हो सकता।

चलचित्त मनुष्य की आत्मा कभी शान्त नहीं होती, न उसे उस मनुष्य से सुख मिलता है जिसके साथ कि यह अपना सम्बन्ध पैदा करता है।

उसका जीवन असमान है; उसकी चेष्टायें अनियत है; उसकी आत्मा ऋतु के साथ बदल जाती है।

आज वह तुझसे प्रेम करता है तो कल तुझसे घृणा करेगा; कारण यह है कि उसे स्वयं मालूम नहीं कि पहले मैं क्यों प्रेम करता था, और अब क्यों घृणा कर रहा हूँ।

यदि आज वह तुझ पर अत्याचार करता है, तो कल वह तेरा विनीत दास बन जाता है; क्यों?

जो व्यक्ति बिना शक्ति के घमण्ड करता है वह अपने आप बिना वश्यता के दीन भी बन जायगा।

यदि आज उसके यहाँ बहुतायत है तो कल वह रात की रोटी (ब्यालू) के लिए तरसता फिरेगा। असंयमी मनुष्य की ऐसी ही दुर्दशा होती है।

गिरगिट को काला कौन कहता है जब वह एक मिनट के बाद हरी घास के अन्दर छिप जाता है ?

चलचित्त को आनन्दित कौन कहेगा जो एक पल बाद ठण्डी आहें भरने लगता है ?

ऐसे मनुष्य का जीवन स्वप्न की एक छाया है। प्रातःकाल वह प्रसन्नचित्त उठता है, और दोपहर को शिकंजे में कस जाता है; अभी वह देवता है और एक ही मिनट बाद वह कीड़े से भी नीचतर है; एक मिनट में वह हँस रहा है और दूसरे मिनट में वह रो रहा है; अभी उसके मन में एक सङ्कल्प पैदा होता है, परन्तु दूसरे मिनट में वह बदल जाता है, और तीसरे मिनट में उसे सब कुछ भूल जाता है।

उस पर न तो सुख का और न दुःख का ही अधिकार है, न वह बड़ा बनता है और न छोटा; न उसके पास हँसने के लिए कोई कारण है और न रोने के लिए कोई युक्ति इसलिए उसके पास इन दोनों में से कोई भी चिरकाल तक नहीं ठहरता।

अस्थिरचित्त की प्रसन्नता रेत पर बने हुए भवन के सदृश है, आंधी के एक ही झोंके से इसकी भित्ति हिल जाती है, और उसके गिर पड़ने में आश्चर्य ही क्या है!

परन्तु वह कौनसा उन्नत रूप है जिसका पैर स्थिर और बेरोक है? जिसका पांव पृथ्वी पर और सिर बादलों के ऊपर है?

उसके ललाट पर प्रताप, उसकी चाल में स्थिरता, और उसके हृदय में शान्ति का राज्य है।

यद्यपि उसके मार्ग में बाधायें दिखाई देती हैं परन्तु वह उनकी परवा नहीं करता; यद्यपि पृथ्वी और आकाश उसके मार्ग में रुकावटें हैं फिर भी उसकी गति बन्द नहीं होती।

पर्वत उसके पाँवों के नीचे दब जाते हैं, और समुद्र उसके पैरों के तलुवों के नीचे सूख जाते हैं।

सिंह उसके मार्ग मे अपने आपको व्यर्थ डालता है, चीते के धब्बे उसे भयभीत करने में असमर्थ हैं।

वह सशस्त्र सेना के बीच से बे-खटके गुजर जाता है; और मृत्यु के डर को अपने हाथ से एक ओर हटा देता है।

आँधियाँ उसके पाँवों को उखाड नहीं सकतीं, मेघों का गर्जन उसे डरा नहीं सकता; बिजली की चमक उसे चकाचौंध करने के बदले उसके मुख-मण्डल को प्रकाशित करती है।

उसका नाम दृढ़ सङ्कल्प है! वह संसार के नितान्त भागों में रहता है; वह सुख को बहुत दूर से अपने सम्मुख देखता है, उसकी आँख उसके मन्दिर को ध्रुव की सीमाओं के भी परे देख लेती है।

वह इसके पास जाता है, और बड़े साहस के

साथ उसके अन्दर प्रवेश करता है; और वहां सदा के लिए रहने लगता है।

हे मनुष्य ! तू अपना मन सत्य में लगा; तब बड़ी से बडी मानुषी प्रशंसा भी तेरे लिए स्थिर रहेगी।

तीसरा प्रकरण।

निर्बलता।

हे त्रुटियों के पुतले मनुष्य ! तू वृथाभिमानी और अस्थिरचित्त होने के कारण निर्बल होने से कैसे बच सकता है ? क्या चलचित्तता निर्बलता के साथ सम्बद्ध नहीं ? क्या निर्बलता के विना वृथाभिमान हो सकता है ? एक के भय से बच, फिर दूसरे से तू अपने आप बच जायगा।

तू किस बात में सबसे ज़ियादा निर्बल है ? उसी में जिसमें तू अपने आपको बहुत प्रबल समझता है; उसी में जिस पर तू सबसे ज़ियादा गर्व

करता है; जो सामान तेरे कब्जे में है उसके कारण भी तू निर्बल है।

क्या तेरी कामनायें भी निर्बल नहीं हैं? क्या तू जानता है कि तेरी प्रकृत कामना क्या है? जिस वस्तु की तलाश में तू सबसे अधिक परिश्रम करता है उसके मिल जाने पर भी तेरी कामना पूरी नहीं होगी।

सुख की जो सामग्री तेरे पास है उससे तुझे आनन्द क्यों नहीं आता? और जो चीज अभी तुझे मिली नहीं वह तुझे मधुर क्यों जान पड़ती है? इसका कारण यह है कि पहली के स्वाद से तेरा दिल उकता गया है और दूसरी चीज की कटुता का अभी तूने अनुभव नहीं किया।

याद रख कि सन्तोष में ही सुख मिल सकता है।

जिन वस्तुओं के लिए तेरा मन लालायित रहता है उनका ढेर तेरा स्रष्टा यदि तेरे सामने लगा दे तो क्या तू उनमें से अपने लिए चुन लेगा?

फिर क्या तू सुखी रहेगा ? या क्या सदा तेरे घर में आनन्द की वर्षा होती रहेगी ?

हा हन्त ! तेरी निर्बलता इसकी बाधक है ! तेरी क्षीणता इसके विरुद्ध है । विचित्रता तेरे लिए सुख का कारण है; परन्तु जिससे स्थायी सुख प्राप्त होता है वह स्वयं भी स्थायी होनी चाहिए ।

जब वह चीज़ हाथ से जाती रहती है तब तू पछताता है, और जब वह तेरे पास थी तब तू उसकी उपेक्षा करता था ।

जो वस्तु इसके बाद इसके स्थान में आती है उससे भी तुझे प्रसन्नता नहीं होती; फिर तू उसे उत्तम समझने पर अपने आपको बुरा-भला कहता है, उस एक व्यापार पर विचार कर जिसमें तू भूल नहीं करता ।

क्या तेरी निर्बलता तेरी कामना से बढ कर और किसी वस्तु में प्रकट होती है ? मनोवाञ्छित पदार्थों को इकट्ठा करने और उनका उपयोग करने में है ।

किसी अच्छी चीज का उपभोग कर चुकने के बाद फिर वह चीज़ अच्छी नहीं रहती, प्रकृति ने जिन पदार्थों को विशुद्ध मधुर बनाया हैं वे हमें कडवे मालूम होने लगते है, हमारे हर्ष से शोक, और हमारे सुख से दुःख पैदा हो जाता है ।

भोगों को भोगने मे मर्यादा से काम ले, और वे सदा तेरे लिए रुचिकर रहेंगे, तेरे आनन्द का आधार बुद्धि होनी चाहिए, फिर अन्त तक शोक इसके पास न आयगा ।

प्रेम के आनन्दों का आरम्भ ठण्डी आहों से, और अन्त अवसन्नता और विषण्णता से होता है; जिस वस्तु की प्राप्ति के लिए तेरा मन व्याकुल हो रहा था वह जब तुझे मिल जाती है और तेरी मनोकामना पूर्ण हो जाती हैं तो तबीयत भर जाती हैं और सारी उत्सुकता जाती रहती हैं।

प्रशंसा के साथ आदर को भी जोड; अपने प्रेम के साथ मित्रता को भी गांठ, इसके द्वारा अन्त में तुझे ऐसा विशुद्ध सन्तोष प्राप्त होगा कि सभी

आनन्द उसके सामने तुच्छ होंगे, और ऐसी शान्ति मिलेगी कि प्रहर्ष उसके मुक़ाबले मे कोई चीज़ ही न होगा ।

परमेश्वर ने तुझे कोई भी भलाई ऐसी नहीं दी जिसके साथ बुराई मिली न हो; पर उसने तुझे उसमे से बुराई को निकाल फेंकने का साधन भी दिया है ।

जिस प्रकार दुःख की मिलावट के बिना सुख नहीं, इसी प्रकार हर्ष के अंश के बिना शोक भी नहीं । हर्ष और शोक, असदृश होने पर भी, आपस मे जुड़े हुए है; इनमे से जिसको हम चुन लेते है वही हमे पूरा पूरा मिल जाता है ।

विषण्णता स्वयं भी अनेक बार हमे हर्ष-प्रदान करती है; और हमारे आनन्द की पराकोटि अश्रुओ के साथ मिली हुई है ।

मूर्ख के हाथ में अच्छी चीज़ जाकर भी उसके विनाश का कारण बन सकती है; और बुद्धिमान् निकृष्ट से निकृष्ट पदार्थ से भी लाभ उठाने का उपाय निकाल लेता है ।

हे मनुष्य ! तेरी धातु मे निर्बलता ऐसी मिली हुई है कि तू कभी बिलकुल अच्छा या बिलकुल बुरा नही बन सकता। इस बात पर प्रसन्न हो कि तू बुराई मे बहुत बढ़ नहीं सकता, इसलिए जो भलाई तेरी पहुँच में है उसी पर सन्तुष्ट रह।

भलाइयो के भी विविध दर्जे हैं; असम्भव बातो की प्राप्ति का यत्न मत कर, और न इस बात पर खेद कर कि तू उन सबको प्राप्त नहीं कर सकता।

क्या तू एक साथ धनियों की सी उदारता और निर्धनां का सा सन्तोष प्राप्त करना चाहता है ? या क्या तू अपनी साध्वी स्त्री से इसलिए घृणा करता है कि वह विधवा की सी साधुता प्रकट नहीं करती ?

यदि तेरा पिता तेरे सामने स्वदेश के घरेलू कलहों मे पड़ जाय, तो क्या तेरा न्याय उसे एक-दम नष्ट कर देगा या तेरा पुत्र-धर्म्म उसके जीवन की रक्षा करेगा ?

यदि तू अपने भाई को दारुण दुःख से घुल घुल कर मरता देखे तो क्या तेरी दया उसके जीवन

को न बढ़ायगी; और क्या मृत्यु भी उसकी घातक नहीं बनेगी ?

सत्य केवल एक है, तेरे सन्देह तेरे स्वयं पैदा किये हुए हैं; जिसने सद्गुण बनाये है उसने उनकी उत्कृष्टता का ज्ञान भी तेरे हृदय मे डाल दिया है, सदा अन्तरात्मा के आज्ञानुसार कर्म कर, फिर सदा शुभ फल होगा।

चौथा प्रकरण।

ज्ञान की कमी।

यदि कोई वस्तु मनोहर है, यदि कोई वस्तु वाञ्छनीय है, यदि कोई प्रशंसनीय वस्तु मनुष्य की पहुँच मे है, तो वह ज्ञान है। फिर भी कौन है जो उसे प्राप्त कर सकता है ?

राजनीतिज्ञ कहता है कि ज्ञान का भण्डार मेरे ˎ है, प्रजा का शासक इसकी प्रशंसा का पात्र

अपने आपको बताता है; परन्तु कौन कह सकता है कि उसके पास ज्ञान है ?

बुराई मनुष्य के लिए आवश्यक नहीं, और न अधर्म्म को सहना उसके लिए प्रयोजनीय है; फिर भी आईन की उपेक्षा से कितनी बुराइयाँ प्रचलित हैं ? और न्याय-सभा की व्यवस्थाओं से कितने अपराध किये जाते हैं ?

परन्तु हे शासक ! बुद्धिमान् बन, और तू जिसे कि जातियों पर शासन करना है ! याद रख, तेरा एक अपराध की आज्ञा देना तेरे दस अपराधों को बिना दण्ड दिये छोड़ देने से बुरा है।

जब तेरी प्रजा की संख्या बढ़ जाती है, जब तेरी सन्तान बहुत हो जाती है, तब क्या तू उनको निरपराधों को मारने, और उस मनुष्य की तलवार से मरने के लिए—जिसका उन्होंने कोई अपराध नहीं किया—नहीं भेजता ?

यदि तेरी कामना को पूरा करने के लिए तेरे एक सहस्र बच्चों के प्राणों का प्रयोजन हो तो क्या

तू नहीं कहता कि "मै अपनी कामना अवश्य पूरी करूँगा ?" निस्सन्देह तू इस बात को भूल जाता है कि जिसने तुझे बनाया है उसी ने इन्हे भी बनाया है, और इनका रक्त भी उतना ही बहुमूल्य है जितना कि तेरा।

क्या तू यह कहता है कि अन्याय के बिना न्याय नहीं हो सकता ? अवश्य ही तू अपने ही शब्दों से दण्डनीय ठहरता है।

तू जो कि झूठी आशाओं से अपराधी के मन को बहला कर उससे अपराध का अङ्गीकार कराना चाहता है क्या तू उसके सामने अपराधी नहीं; या क्या तेरा अपराध इस कारण कम है क्योंकि वह तुझे दण्ड देने में असमर्थ है ?

जब तू किसी को केवल सन्देह के कारण ही यातना देता तब क्या तू इतना ख़याल कर सकता है कि तू एक निरपराध को दुःख दे रहा है ?

क्या इससे तेरा प्रयोजन सिद्ध हो जायगा ? क्या उसके पाप-प्रकाशन से तेरी आत्मा सन्तुष्ट हो

जायगी ? पीड़ा उससे वैसी ही सुगमता से झूठ कहला देगी जैसी सुगमता से कि वह सच कह सकता है; यातना से निरपराध अपने को अपराधी स्वीकार करने पर बाध्य होता है।

तू जो उसे अकारण मार डालना नहीं चाहता उससे बलात्कार झूठ बुलवाकर और भी ज़ियादा बुरा काम करता है; उसको अपराधी प्रमाणित करने के लिए तू उस निरपराध को नष्ट करता है।

हे सत्य को न देख सकनेवाले! हे बुद्धिहीन! जब धर्म्मराज तुझसे इस कर्म्म का उत्तर माँगेगा तो तू पश्चात्ताप करता हुआ कहेगा कि एक निरपराध को दण्डित करने की अपेक्षा मेरे लिए एक सहस्र अपराधियों को अदण्डित छोड़ देना अच्छा था।

न्याय की प्रतिष्ठा में तू असमर्थ है, तो फिर तू सत्य बात का ज्ञान कैसे प्राप्त करेगा? तू उसके राज-सिंहासन के पास कैसे पहुँचेगा?

जिस प्रकार सूर्य के तेज से उल्लू की आँखें

चौंधिया जाती है, उसी प्रकार उसके मुखमण्डल की दीप्ति तुझे उसके पास न जाने देगी।

यदि तू उसके सिंहासन के पास जाना चाहता है तो पहले उसकी चौकी के सामने सिर नवा, यदि तू सत्य का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है तो पहले अपनी अविद्या को जान।

वह मोतियों से भी बढ़ कर मूल्यवान् है, इसलिए सावधानी से उसकी खोज कर, मणि-मुक्ता उसके पाँवों की मिट्टी है इसलिए पुरुषोचित वीरता के साथ उसकी तलाश कर।

सत्य के मन्दिर का मार्ग परिश्रम है, उसकी बन्दरगाह तक जहाज़ को ले जानेवाला कर्णधार मनोयोग है, परन्तु तू मार्ग मे ही थक कर मत पड़ा रह, क्योंकि जब तू उसके पास पहुँच जायगा तो तेरा कष्ट हर्ष मे बदल जायगा।

अपने मन मे यह मत कह कि सत्य से लोग घृणा करते है इसलिए मै इससे दूर रहूँगा, परन्तु दम्भ से मित्र बनते हैं इसलिए मैं इसका आश्रय

लूँगा; क्या सचाई के कारण बने हुए शत्रु खुशामद से प्राप्त किये मित्रों से अच्छे नहीं ?

स्वभाव से मनुष्य सत्य-कामी है लेकिन जब सत्य उसके सामने आता है तो वह उसे पहचान नहीं सकता; और यदि सत्य अपने को उस पर ठूँसे तो क्या वह अप्रसन्न नहीं होता ?

दोष सत्य का नहीं क्योंकि वह तो स्नेहशील है; परन्तु मनुष्य की निर्बलता उसके तेज को सहन नहीं कर सकती ।

क्या तू अपनी अक्षमता और न्यूनता को अधिक स्पष्टरूप से देखना चाहता है ? तो अपने आप पर उपासना के समय दृष्टि डाल; धर्म्म किस प्रयोजन के लिए बनाया गया था ? केवल तुझे तेरी त्रुटियों का बोध कराने के लिए; तेरी निर्बलताओं की तुझे याद दिलाने के लिए; और यह दिखलाने के लिए कि केवल जगदीश्वर से ही तुझे सारी अच्छी चीज़ों की आशा करनी चाहिए ।

क्या धर्म्म तुझे यह नहीं बताता कि तू मिट्टी

है ? क्या यह तुझे यह नहीं सिखाता कि तू राख है ? तेरे पश्चात्ताप से क्या यह प्रकट नहीं होता कि तू निर्बलताओं का पुतला है ?

जब तू शपथ करता है; जब तू धोखा न देने की शपथ लेता है; तो उस समय तेरे मुख पर और जिसको तू शपथ देता है उसके मुख पर लज्जा प्रकट होती है; न्यायशील बन, फिर पश्चात्ताप को तू भूल जायगा; ईमानदार और निष्कपट बन, फिर शपथों की कोई आवश्यकता नहीं।

जितनी छोटी मूर्खतायें हो उतना ही अच्छा है; इसलिए अपने आप में मत कह कि "मैं अधूरा मूर्ख नहीं बनना चाहता"।

जो मनुष्य अपने दोषों को धैर्य के साथ सुनता है वही दूसरों को दिलेरी से झिड़क सकता है।

जो युक्ति के साथ इनकार करता है वही इनकार को धैर्य के साथ सह सकेगा।

यदि तुझ पर सन्देह किया जाय तो स्वतन्त्रता

के साथ उसका उत्तर दे; अपराधी के सिवा सन्देह से और कौन भयभीत हो सकता है ?

कोमल-हृदय मनुष्य सविनय प्रार्थनाओं से अपने काम को छोड़ देता है; परन्तु अनुनय से अभिमानी और भी दुराग्रह करने लगता है; तेरी न्यूनता और अक्षमता की बुद्धि तुझे दूसरों की बात पर ध्यान देने के लिए बाध्य करती है; परन्तु न्याय यह चाहता है कि तू सब मनोविकारों को छोड़ कर शुद्ध हृदय से उनकी बातों को सुने।

पाँचवाँ प्रकरण।

विपत्ति।

हे मनुष्य! भलाई में तू निर्बल और अक्षम है; सुख में तू अस्थिर और क्षीण है। क्या कोई ऐसी बात है जिसमें तू दृढ़, अचल और मज़बूत है? हाँ, उसका नाम विपत्ति है।

यह तेरी सत्ता का गुण है; तेरी प्रकृति का

विशेषाधिकार है; यह केवल तेरे हृदय में ही निवास करती है; तेरे विना इसका कुछ भी नहीं; और देख, तेरे अपने ही विकारों के सिवा इसका सोता और क्या है ?

जिसने तुझे ये विकार दिये हैं उसने उन्हें दबाने की बुद्धि भी दी है, इससे काम ले और तू उन्हें अपने पाँवों तले रौंद डालेगा।

इस संसार मे तेरा आगमन क्या लज्जाजनक नहीं ? क्या तेरा विनाश यशस्कर नहीं ? देखो ! लोग मृत्यु के शस्त्रों को सुवर्ण और मणि-मुक्ता से सुसज्जित करके अपनी पोशाक के ऊपर पहनते हैं।

जो मनुष्य बच्चा पैदा करता है वह लज्जा से अपना मुख छिपाता है; परन्तु जो एक सहस्र को मार डाले उसका यश होता है।

इस पर तू याद रख कि इसमें सरासर भूल है; लोकाचार सत्य के स्वरूप को बदल नहीं सकता; और न एक मनुष्य की राय न्याय का

नाश कर सकती है; लज्जा और यश को अनुचित स्थान दिया गया है।

मनुष्य के पैदा होने की केवल एक ही विधि है; परन्तु उसके विनाश की हज़ारों है।

जो व्यक्ति एक बालक के जन्म का कारण बनता है उसकी कोई प्रशंसा या सम्मान नहीं करता, परन्तु रक्तपात का पुरस्कार साम्राज्य और विजयोत्सव समझे जाते हैं।

फिर भी जिस मनुष्य के जितने सन्तान है उतने ही उसके पास सुख हैं; और जिसने दूसरे के प्राण लिये हैं वह अपना जीवन भी नही भोगता।

नरपशु जो अपने पुत्र के जन्म को कोसता है, और पिता की मृत्यु पर हर्ष प्रकाशित करता है; क्या वह अपने को राक्षस नहीं ठहराता ?

मनुष्य के भाग में काफी से जियादा दु:ख और विपत्ति आई हैं, परन्तु वह रो रो कर इसे और भी बढ़ा लेता है।

मनुष्य का सबसे बड़ा दुःख शोक है; यह जन्म से ही तुझे बहुत ज़ियादा मिला है, तू अपनी उच्छृङ्खलता से इसे मत बढ़ा।

सन्ताप तेरे लिए स्वाभाविक है, और सदा तेरे चारों ओर रहता है; हर्ष एक प्रवासी है जो कभी कभी तेरे यहाँ आता है, अपनी बुद्धि से अच्छी तरह काम ले फिर सन्ताप तेरे पीछे रह जायगा; दूरदर्शी बन, फिर आनन्द तेरे पास चिरकाल तक रहेगा।

तेरी रचना का प्रत्येक अंश शोक से प्रभावित हो सकता है; परन्तु हर्ष के मन्दिर को जानेवाले मार्ग बहुत थोड़े और सङ्कीर्ण हैं।

आनन्द एक एक करके तेरे घर आते है परन्तु विपत्तियाँ एक साथ सहस्र सहस्र आती हैं। जिस प्रकार तृण जल कर शीघ्र ही बुझ जाता है, उसी प्रकार आनन्द बहुत शीघ्र चला जाता है और तू नहीं जानता कि वह कहाँ चला गया।

शोक बार बार आता है, परन्तु हर्ष बहुत

कम, कष्ट आपसे आप आता है, परन्तु आनन्द को अपने लिए यत्न से ख़रीदना पड़ता है, शोक तो अमिश्रित है, परन्तु हर्ष मे कटुता मिली रहती है।

जिस प्रकार मनुष्य बहुत उत्तम स्वास्थ्य का भी अनुभव नहीं करता, परन्तु हल्के से हल्के दुःख को बहुत मानता है, उसी प्रकार बडे से बड़ा हर्ष भी छोटे से छोटे शोक के मुक़ाबले मे तुच्छ मालूम होता है।

हमें परिताप से प्रेम है; हम प्रायः हर्ष से दूर भागते हैं; जब हम इसे ख़रीदते हैं तब क्या हमे इसके गुणों से बढ कर मूल्य नही देना पड़ता ?

चिन्ता मनुष्य का व्यापार है, अपनी दशा को पहचानना उसका मुख्य कर्तव्य है; परन्तु हर्ष के समय कौन अपने आपको स्मरण रखता है ? इसलिए, तब क्या हमे शोक दया से नही दिया गया ?

आनवाली विपत्ति को मनुष्य पहले ही देख लेता है; उसके गुज़र जाने पर वह उसे याद रखता

है, वह यह नहीं जानता कि दुःख का विचार खुद दुःख से भी गहरा घाव लगाता है; जब तक दुःख तेरे ऊपर न आ पड़े उसका विचार मत कर, इससे तू बहुत ज़ियादा कष्ट से बचा रहेगा।

जो मनुष्य आवश्यकता से पहले रोता है; वह आवश्यकता से अधिक रोता है, कारण ? उसे रोने से प्रेम है।

भाले की चोट लगने के पहले बारहसिंगा कभी नहीं रोता, न ख़रगोश के अश्रु तब तक गिरते है जब तक कि शिकारी कुत्ता उसे आकर नहीं पकड़ लेता, मनुष्य मृत्यु की शङ्काओं से उसका पहले से ख़याल करता है, और मृत्यु का डर स्वयं मृत्यु से बढ़ कर दु.खदायक है ।

अपने कर्म्मो का हिसाब देने के लिए हर वक़्त तैयार रह; और सबसे उत्तम मृत्यु वह है जिसकी पहले से बहुत कम चिन्ता होती है।

छठा प्रकरण ।

विवेक ।

परमात्मा के मनुष्य को दिये सबसे बड़े दान विवेक और इच्छा है; वह मनुष्य सुखी है जो इनका दुरुपयोग नहीं करता ।

जैसे पर्वत से नीचे गिरनेवाला जल-प्रवाह अपने मार्ग मे आनेवाली सभी वस्तुओं को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार लोक-मत उस मनुष्य की बुद्धि को नष्ट कर डालता है जो उसके सामने सिर तो झुका देता है पर यह नहीं कहता कि "तेरी भित्ति किस चीज़ पर है ?"

इस बात का ख़याल रख कि जिसे तू सत्य समझता है वह कहीं सत्याभास न हो; जिसे तू निर्णायक स्वीकार करता है वह प्रायः सत्याभासात्मक होती है, दृढ़ हो, स्थिर हो, अपने लिए निश्चय कर; इससे तू अपनी ही निर्बलता का उत्तरदाता होगा ।

यह मत कह कि वृत्त क्रिया के औचित्य को प्रमाणित करता है; याद रख, मनुष्य दैवगति की पहुँच से ऊपर नहीं।

दूसरे के विचार को इसलिए बुरा मत कह कि वह तेरे विचार से भिन्न है; क्या यह नहीं हो सकता कि दोनों ही ग़लती पर हों?

जब तू किसी मनुष्य के गुणों का अनुमान उसकी उपाधियों से करता है और वैदेशिक का उनके न होने के कारण सम्मान नहीं करता, तब तू ऊँट का उसकी नकेल से विचार करता है।

मत समझ कि अपने शत्रु का वध करके तू उससे बदला ले सकता है; इससे तू उसे अपनी पहुँच से परे कर देता है; तू उसे शान्त कर देता है; और उसको दुःख देने के सभी साधनों से तू अपने आपको वञ्चित कर लेता है।

क्या तेरी माता असती थी, और तू उसके व्यभिचार की बात सुन कर दुःखित होता है? क्या तेरी प्रिया पत्नी में नैतिक दुर्बलता है और इससे

तुझे लज्जा और कष्ट होता है ? जो तुझे इसी कारण घृणित समझता है वह अपने आपको दोषी ठहराता है; क्या तू दूसरों के पापों के लिए उत्तर-दाता है ?

मणि का इस कारण निरादर मत कर कि वह तेरे अधिकार में है; किसी वस्तु के मूल्य को इस-लिए मत घटा कि वह किसी दूसरे की है; बुद्धिमान् के अधिकार में किसी वस्तु के होने से उसका मूल्य बढ़ जाता है ।

अपनी स्त्री का आदर इसलिए कम मत कर कि वह तेरे अधिकार में है; और उस मनुष्य को घृणा की दृष्टि से देख जिसका कथन यह है कि "यदि तू उससे कम प्रेम करना चाहता है तो उससे विवाह कर ले !" उसने तेरे सद्गुणों पर भरोसा करके अपने को तेरे सिपुर्द किया है । क्या तू उसका अधिक आभारी होने के कारण उसे अब कम प्यार करेगा ?

यदि तू अभी उससे विवाह के लिए सानुनय

प्रार्थना ही कर रहा हो, और उस समय उसे अपने अधिकार में समझ कर उसकी उपेक्षा करने लग जाय तो उसके तेरे हाथ से निकल जाने पर तुझे बहुत दुःख होगा।

जो मनुष्य एक दूसरी स्त्री को इसलिए सर्वोत्तम समझता है कि वह उसके अधिकार में है, वह चाहे तुझसे अधिक बुद्धिमान् न हो, परन्तु वह तुझसे अधिक सुखी ज़रूर है।

अपने मित्र की क्षति को उसके नेत्रों से गिरनेवाले अश्रुओं से मत जाँच, क्योंकि बड़े बड़े दुःखों का प्रकाश करना अश्रुओं की शक्ति से बाहर है।

किसी काम को इसी लिए बड़ा मत समझ कि वह बडी धूमधाम से किया गया है, श्रेष्ठ आत्मा वह है जो बड़े बड़े काम करता है पर उन पर घमण्ड नहीं करता।

ख्याति उस मनुष्य के कान को चकित कर ता है जो इसे सुनता है; परन्तु जो इसकी

उपेक्षा करता है उसका हृदय शान्ति से परिपूर्ण रहता है।

दूसरे के उत्तम कार्यों के बुरे अर्थ मत निकाल, तू उसके हृदय को नहीं जान सकता, परन्तु संसार को इससे यह मालूम होगा कि तेरा हृदय द्वेष से भरा हुआ है।

दम्भ में पाप से बढ़ कर मूर्खता है, निष्कपट और ईमानदार बनना वैसा ही सुगम है जैसा कि इनका दिखलावा करना।

बदला लेने की अपेक्षा उपकार मानने के लिए अधिक उद्यत रह; इससे तुझे लाभ ज़ियादा और हानि कम होगी।

घृणा करने की अपेक्षा प्रेम करने के लिए अधिक उद्यत रह; इससे तेरे प्रेमियों की संख्या तुझसे घृणा करनेवालों की अपेक्षा अधिक होगी।

प्रशंसा करने के लिए उद्यत, और निन्दा करने के लिए अनुद्यत रह, इससे तेरे सद्गुणों की

प्रशंसा होगी, और तेरी त्रुटियों को शत्रु की आंख भी न देखेगी।

जब तू कोई उत्तम काम करे तो इसे इसके उत्तम होने के कारण ही कर, न कि इसलिए कि लोग इसे अच्छा कहते है; जब तू किसी बुरे काम से दूर भागे तो इसके बुरा होने के कारण ही भाग, न कि इसलिए कि लोग बुरा समझते है; निष्कपटता से प्रेम के कारण ही निष्कपट बन, और तू सदा ही निष्कपट बना रहेगा। जो बिना किसी सिद्धान्त के ईमानदार बनता है वह सदा डाँवाडोल रहता है।

बुद्धिमानो की झिड़कियां बुद्धिहीनो की प्रशंसा से अच्छी है, जब वे तुझे तेरा कोई दोष बताते है तो वे समझते है कि तू उसे दूर कर सकता है; परन्तु जब बुद्धिहीन तेरी प्रशंसा करते है तो वे तुझे अपने ऐसा समझ लेते है।

जिस कार्य के तू अयोग्य है उसे स्वीकार मत कर क्योकि जो तुझसे अधिक जानता है वह तुझे तुच्छ

जिस बात का तुझे ज्ञान नहीं उसकी शिक्षा दूसरों को मत दे; क्योंकि जब उन्हे तेरी अनभिज्ञता का पता लगेगा तो वे तेरी निन्दा करेंगे।

जिसने तुझे हानि पहुँचाई है उससे मित्रता की आशा मत रख, क्योंकि दुःख उठानेवाला दुःख भूल जाता है परन्तु दुःख देनेवाला उसका कभी शुभचिन्तक नहीं हो सकता।

जिसे तू अपना मित्र बनाना चाहता है उस पर बहुत ज़ियादा उपकार मत कर, याद रख ! उपकार के बोझ के कारण वह तुझसे दूर भागेगा; एक छोटी सी उपकृति से मित्रता में भेद पड़ जाता है, और बड़े उपकार से शत्रुता पैदा हो जाती है।

तो भी कृतघ्नता मनुष्य की धातु मे नही, उसका क्रोध भी ऐसा नहीं कि जिससे फिर मेल-मिलाप न हो सके; जिस ऋण को वह चुका नहीं सकता उसका स्मरण करना उसे पसन्द नहीं; वह उसके सामने लज्जित होता है जिसे उसने हानि पहुँचाई है।

प्रवासी के सद्गुणों पर खेद मत कर; और न अपने शत्रु को विपत्ति में फँसा देख कर प्रसन्न हो। क्या तू यह चाहता है कि लोग भी तेरे साथ ऐसा ही बर्ताव करें ?

क्या तू सबकी सुहितता प्राप्त करना चाहता है ? तो सबके साथ उदारता का बर्ताव कर। यदि तुझे इससे सुहितता प्राप्त न हो तो फिर यह किसी अन्य साधन से तुझे न मिल सकेगी; परन्तु याद रख कि यद्यपि तुझे यह नही मिली तो भी तुझे इस बात की प्रसन्नता रहेगी कि तूने अपने को इस का पात्र बनाया है।

सातवाँ प्रकरण।

धृष्टता।

गर्व और नीचता असङ्गत दीख पड़ते है, परन्तु मनुष्य की प्रकृति मे विपर्ययों का मिलाप पाया जाता

है; वह सकल भूतों में सबसे ज़ियादा दुखी और सबसे ज़ियादा अभिमानी है।

धृष्टता बुद्धि की विनाशक है; यह भूल की जननी है, फिर भी यह हमारे अन्दर बुद्धि के समान-शील है।

क्या कोई ऐसा मनुष्य है जो अपने मन में अपने को बहुत उच्च और दूसरों को बहुत नीच नहीं समझता ?

हमारा स्रष्टा भी हमारी धृष्टता से बचा नहीं; फिर हम एक दूसरे से कैसे बच सकते हैं ?

मूढ विश्वास का मूल क्या है ? और झूठी उपासना कहाँ से पैदा हुई है ? हमने अपनी बुद्धि से उस सत्ता का पता लगाने का यत्न किया जो कि इसकी पहुँच से बाहर है, और अज्ञेय है।

यद्यपि हमारी बुद्धि परिमित और निर्बल है, फिर भी हम उसकी छोटी सी शक्ति से उतना काम नहीं लेते जितना कि हमें लेना चाहिए, हम परमेश्वर की महिमा को जानने के लिए अपने विचार को काफ़ी

ऊँचा नहीं करते; ईश्वर की आराधना करते समय हम अपने भावों को ऊँचा उड़ने नहीं देते।

जो मनुष्य अपने सांसारिक राजा के विरुद्ध डर के मारे एक शब्द नहीं कह सकता, वह ईश्वरीय विधान की निन्दा करने से ज़रा नहीं डरता; वह उसकी विभूति को भूल जाता है, और उसके शासन की आलोचना करता है।

जो अपने लौकिक प्रभु का नाम आदर के बिना लेने का साहस नहीं कर सकता, वह परमेश्वर के नाम पर झूठी शपथ खाने से नहीं हिचकता।

जो मनुष्य न्यायाध्यक्ष का निर्णय चुपचाप सुन लेता है वह सनातन परमेश्वर के साथ विवाद करने की धृष्टता करता है, वह अभ्यर्थना से उसे प्रसन्न करने का यत्न करता है, वह उसके साथ प्रतिज्ञा करता है; उसके साथ शर्तें बांधता है; और यदि उसकी प्रार्थना स्वीकार नहीं होती तो उसकी अवज्ञा और शिकायत करता है।

हे मनुष्य! तुझे अपनी अभक्ति का दण्ड क्यो

नहीं मिलता ? यह कर्मों का फल देने का दिन नहीं है !

तू उन मनुष्यों के सदृश मत बन जो मेघनाद के साथ इसलिए लडते है कि इसके वनानेवाले का सुधार करें; न अपनी प्रार्थनाओं मे तू उससे इस कारण इनकार करने की धृष्टता कर कि वह तुझे दण्ड देता है; इस विपय में तेरी मूर्खता तेरे ही सिर पर है, तेरी अभक्ति से तेरे सिवा और किसी की हानि नहीं होती।

मनुष्य इस बात का अभिमान क्यों करता है कि मैं अपने कर्त्ता का प्रिय हूँ, जब कि वह उसका धन्यवाद और उसकी भक्ति नहीं करता; ऐसे जीवन का ऐसे गर्वित विश्वास के साथ मेल कैसे हो सकता है ?

मनुष्य जो इस अनन्त ब्रह्माण्ड मे केवल एक त्रसरेणु है यह मानता है कि पृथ्वी और आकाश मेरे ही लिए उत्पन्न हुए है, वह समझता है कि सकल सृष्टि मेरे ही कल्याण के लिए है ।

जब पानी पर प्रतिबिम्ब हिलते है तब मूर्ख यह समझता है कि पेड़, नगर, और विस्तृत दिङ्मण्डल उसको प्रसन्न करने के लिए नाच रहे है, उसी प्रकार मनुष्य भी, जब तक प्रकृति अपना निरूपित कार्य कर रही है, यह खयाल करता है कि उसकी सभी चेष्टायें मेरा ही चित्त प्रसन्न करने के लिए है।

जब वह शरीर को तपाने के लिए सूर्य की धूप के लिए तड़पता है तब वह समझना है कि वह केवल मेरे ही हित के लिए बनाया गया है; जब वह रात्रि के समय चाँद को चलते देखता है तब समझता है कि यह मेरे ही आनन्द के लिए बना है ।

हे मूर्ख ! तू इतना गर्व क्यों करता है, नम्र बन ! और जान कि जगत् तेरा मन बहलाने के लिए नहीं बनाया गया; शिशिर और ग्रीष्म के परिवर्तन तेरे लिए नही है ।

यदि तेरी सारी जाति नष्ट हो जाय तो भी ससार मे कोई परिवर्तन न होगा; तू उन करोड़ो मे से केवल एक है जिनको यह आनन्द मिला है ।

तू अपने को आकाश तक मत चढा; क्योंकि देख ! फरिश्ते तेरे ऊपर है; न अपने मनुष्य-बन्धुओं से ही घृणा कर कि वे तुझसे नीचे हैं; क्या वे उसी कर्त्ता की रचना नहीं ?

तू जो अपने कर्त्ता की कृपा से सुखी है, अपनी स्वेच्छाचारिता से दूसरों को क्यों दुःख देता है ? सावधान, कहीं यह दुःख तुझ पर ही न उलट आये ।

क्या वे उसी जगन्नाथ की सेवा नही करते जिसकी कि तू करता है ? क्या उसने प्रत्येक के लिए नियम नहीं बनाये ? क्या उसको उनकी रक्षा की चिन्ता नहीं ? फिर भी तू उसके नियम को भङ्ग करने का साहस करता है ?

अपने विचार को सारे संसार से ऊपर मत रख, जो तेरी धारणा से सहमत नहीं उसे झूठा कह कर निन्दा मत कर । दूसरों के लिए निश्चय करने की शक्ति तुझे किसने दी, या संसार से इच्छा का अधिकार कौन छीन ले गया ?

कितनी बातें ऐसी है जिनको पहले रद्द किया गया था पर जो अब सत्य मानी जाती हैं ?

कितनी बातें ऐसी है जिनको अब सत्य माना जाता है पर जो कालान्तर मे रद्द हो जायँगी ? फिर मनुष्य किस बात का निश्चय कर सकता है ?

अपने ज्ञान के अनुसार अच्छे कर्म्म कर, और तू सुखी होगा, बुद्धिमान् बनने की अपेक्षा यहाँ तेरा धर्म्मशील बनना अधिक कर्तव्य है।

जिन बातों को हम समझ नहीं सकते क्या उनमें सच और झूठ एक से नहीं दिखाई देते ? फिर उनमें हमारी धृष्टता के सिवा और कौन निश्चय कर सकता है ?

जो बात हमारी बुद्धि से परे है उसे हम झट मान लेते है, या हम उसको मानने का दिखलावा करने का गर्व करते है ताकि लोगों को यह मालूम हो कि हम इसे समझते हैं; क्या यह मूर्खता और गर्व नहीं ?

कौन है जो बहुत धीरता से प्रतिज्ञा करता है ?

कौन है जो अपनी सम्मति पर बहुत दृढ़ता से डटा रहता है ? केवल वही मनुष्य जो सबसे अधिक अज्ञानी है क्योंकि उसी में सबसे अधिक अभिमान है।

यह प्रत्येक मनुष्य की रीति है कि जिस बात को वह एक बार पकड़ लेता है फिर उसे वह छोड़ना नहीं चाहता. परन्तु अभिमानी सबसे ज़ियादा अपनी बात पर हठ करता है, वह अपनी आत्मा को ही धोखा देने से सन्तुष्ट नहीं होता, प्रत्युत वह दूसरों को भी उसी भ्रम में पड़ने के लिए ज़ोर देता है।

यह मत कहो कि सत्य की प्रतिष्ठा वर्षों से होती है, या जिसको बहुत लोग मानें वही ठीक होता है।

एक मनुष्य की प्रतिज्ञा उतनी ही प्रामाणिक है जितनी कि दूसरे की, परन्तु शर्त यह है कि उनमें बुद्धि का कोई भेद न हो।

तीसरी पुस्तक।

मनुष्य के ऐसे विकार जो उसके अपने लिए और दूसरो के लिए हानिकारक हैं।

पहला प्रकरण।

लोभ।

धन ऐसी चीज़ नहीं जिस पर बहुत ज़ियादा ध्यान दिया जाय; इसलिए उसकी प्राप्ति के लिए भारी यत्न अनुचित है।

जिसको मनुष्य अच्छा कहता है उसकी कामना, और उसकी प्राप्ति का आनन्द, व्यक्तिगत सम्मति पर निर्भर है; उसे अशिष्ट जनों से मत ले; चीज़ों के गुणों की आप परीक्षा कर, फिर तू लोभ नहीं करेगा।

धन की अपरिमित कामना आत्मा में विष के सदृश है, वह इसकी सभी अच्छी बातों को नष्ट

करके इसे अपवित्र बना देती है; ज्यों ही यह आत्मा में जड़ पकड़ती है, सभी सद्‌गुण, सारी ईमानदारी, सकल स्वाभाविक प्रेम वहाँ से चल देते हैं।

लोभी धन के लिए अपनी सन्तान को बेच डालता है; चाहे उसके माता पिता तड़प तड़प कर मर जायँ पर वह अपने रुपयों की पेटी का मुँह नहीं खोलता; धन के सामने वह अपने आपका भी कुछ ख़याल नहीं करता; सुख की तलाश में वह अपने आपको दुःखी बना लेता है।

जो मनुष्य धन की तलाश में अपने मन की शान्ति को इस आशा पर नष्ट कर डालता है कि धन को इकट्ठा करके उसका आनन्द लूटूँगा, वह उस मनुष्य के सदृश है जो अपने घर को बेच कर अपने शरीर को सजाने के लिए भूषण ख़रीदता है।

जहाँ लोभ का शासन है वहाँ आत्मा दरिद्र होती है। जो व्यक्ति धन को मनुष्य का मुख्य लाभ नहीं समझता वह बाक़ी सभी उत्तम चीज़ों को उस पर न्योछावर नहीं कर डालता।

जो दरिद्रता को मानव प्रकृति की सबसे बड़ी विपत्ति समझ कर उससे नहीं डरता, वह दूसरों से बचने के लिए और विपत्तियाँ नहीं ख़रीद लेता।

हे मूर्ख ! क्या धन से सद्गुण अधिक मूल्यवान् नहीं ? क्या पाप दरिद्रता से अधिक नीच नहीं ? प्रत्येक मनुष्य की शक्ति में उसकी आवश्यकताओं के लिए काफी सामग्री है, तू इसी पर सन्तुष्ट रह, फिर तू देखेगा कि माया के दास के दुःखों पर तेरा आनन्द ऊर्मी उठायगा।

प्रकृति ने सोने को पृथ्वी के नीचे छिपाया है मानो वह देखने के योग्य वस्तु नहीं, परन्तु चांदी तेरे पांव के नीचे ही पड़ी रहती है, क्या इसका अर्थ यह नहीं कि सोना तेरे अनुराग का पात्र नहीं और चांदी इस योग्य नहीं कि तू उस पर दृष्टिपात करे।

लोभ हज़ारों लाखो मन्दभाग्यों को पृथ्वी के नीचे दबाता है; ये अपने निष्ठुर प्रभुओं के लिए वह चीज़

खोद कर निकालते है जो कि इनको दुःख देती है, जो इनको उनके किंकरों से भी बढ़कर दुःखित करती है।

पृथ्वी के भीतर जहाँ खज़ाना होता है वहाँ कोई उत्तम पदार्थ नहीं होता; उसके पेट में जहाँ स्वर्ण होता है वहाँ वनस्पत्तियाँ नहीं उगतीं।

जिस प्रकार वहाँ घोड़े के लिए घास, और खच्चर के लिए दाना नहीं होता; जिस प्रकार उन पर्वतों के किनारों पर अनाज के खेत नहीं लहलहाते; जिस प्रकार वहाँ न जितवृक्ष फल देता है और न अङ्गूरों के गुच्छे लगते हैं; उसी प्रकार माया-दास के हृदय में कोई सद्गुण निवास नहीं करता।

धन बुद्धिमान् का दास है, पर मूर्ख के लिए वह प्रजापीड़क राजा है।

माया का दास धन की सेवा करता है पर धन उसे कोई काम नही देता; उसके पास धन ऐसा ही है जैसा कि रोगी के पास ज्वर; वह उसको जलाता

और पीड़ित करता है और मृत्यु तक उसका पीछा नहीं छोड़ता।

क्या धन ने सहस्रों मनुष्यों के सद्गुणों का नाश नहीं कर दिया? क्या इसने कभी किसी में कोई सद्गुण पैदा किया?

क्या उनके पास इसकी प्रचुरता नहीं जो सब से बुरे मनुष्य हैं? फिर तू धनोपार्जन के द्वारा किस लिए ख्याति लाभ करना चाहता है?

क्या सबसे जियादा बुद्धिमान् वे मनुष्य नहीं हुए जिनके पास कि धन सबसे थोड़ा था? फिर क्या ज्ञान में आनन्द नहीं?

जो लोग पाप और दुर्व्यसन में सबसे बढ़े हुए थे उनके पास क्या इसकी विपुलता न थी? फिर क्या उनका अन्त दुःखमय नहीं हुआ?

दरिद्र को अनेक वस्तुओं का प्रयोजन है; परन्तु लोभी अपने को सब वस्तुओं से वञ्चित रखता है।

लोभी किसी का भला नहीं कर सकता; परन्तु

जितनी क्रूरता वह अपने साथ करता है उतनी दूसरो के साथ कदापि नहीं करता ।

धन कमाने के लिए परिश्रम कर, और उसे बाँटने के लिए उदारता से काम ले; मनुष्य को जितना सुख दूसरों को सुखी करके प्राप्त होता है उतना और कभी नहीं होता ।

दूसरा प्रकरण ।

प्रचुरता ।

यदि धन के ढेर इकट्ठे करने से बढ़कर कोई पाप है तो वह धन को व्यर्थ कामों में लगाना है ।

जो मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद बाक़ी रुपये को निष्प्रयोजन बातों में उड़ाता है वह दरिद्रों को उनके नैसर्गिक स्वत्व से वञ्चित रखता है ।

जो मनुष्य अपने ख़ज़ाने को व्यर्थ कार्यों मे उड़ाता है वह अपने आपको भलाई करने के साधनो

से वञ्चित रखता है; वह अपने को पुण्य-कर्म्म करने नही देता जिनका फल कि उसके हाथ मे है; जिनका परिणाम कि उसका अपना आनन्द है।

दरिद्रता में सुखी होने की अपेक्षा धनवान् होकर सुखी होना अधिक कठिन है; मनुष्य दरिद्रता मे विपुलता की अपेक्षा अपने को अधिक सुगमता से संयम में रख सकता है।

दरिद्रता के लिए केवल एक सद्‌गुण का प्रयोजन है और वह गुण धैर्य्य है; धनवान्, यदि उसमे उदारता, मिताचार, दूरदर्शिता और अन्य अनेक गुण न हो तो वह पापी है।

निर्धन के सिपुर्द तो केवल अपने ही हित-चिन्तन का काम किया गया है, परन्तु धनाढ्य का कर्तव्य सहस्रो का पालन-पोपण ठहराया गया है।

जो मनुष्य अपने धन को बुद्धिमत्ता से व्यय करता है वह अपनी अनेक महाव्याधियों से रक्षा करता है; जो धन के ढेर इकट्ठे करता है वह अपने लिए दुःखों के ढेर जमा करता है।

अभ्यागत की आवश्यकता को पूरा कर; जिस वस्तु का तुझे प्रयोजन है वह अपने भाई को देने से इनकार मत कर।

याद रख कि देने से जो आनन्द प्राप्त होता है वह करोड़ों रुपये अपने ख़ज़ाने में रखने से नहीं होता, क्योंकि उस सञ्चित धन के प्रयोग से तू अनभिज्ञ है।

तीसरा प्रकरण।

बदला।

बदले की जड़ आत्मा की निर्बलता में है; जितना अधिक मनुष्य नीच और भीरु होता है उतना ही अधिक उसमें बदला लेने का भाव होता है।

भीरु के सिवा और कौन उनको सताता है जिनसे उसे घृणा है? स्त्रियों के सिवा उनकी कौन हत्या करता है जिनका कि वे माल लूटती हैं?

बदला लेने के पहले दुःख का अनुभव करना आवश्यक है; परन्तु श्रेष्ठ मनुष्य यह कहने से घृणा करता है कि "इससे मुझे दुःख होता है"।

यदि दुःख इतना हलका है कि तू उसे तुच्छ समझता है, तो तुझे दुःख देनेवाले को आप ही दुःख पहुँचता है; क्या तू अपने से निकृष्ट मनुष्यों का मुक़ाबला करना चाहता है ?

जो मनुष्य तुझे क्षतिग्रस्त करने का यत्न करता है उससे तू घृणा कर; जो तुझे अशान्त करना चाहता है उसका भी तिरस्कार कर।

इस प्रकार तू न केवल अपनी ही शान्ति की रक्षा करता है, प्रत्युत तू उसे एक ऐसा दण्ड देता है जिसमें तुझे क्रियात्मक भाग नहीं लेना पड़ता।

सूर्य और तारों का जिस प्रकार आँधी और कड़क कुछ नहीं बिगाड सकतीं, प्रत्युत वह नीचे के पत्थरों और वृक्षों पर अपना संकोप निकालती है; उसी :क महापुरुषों तक क्षति पहुँच नहीं सकती,

प्रत्युत इसका असर उन लोगों पर होता है जो इसके कर्त्ता होते हैं।

आत्मा की दरिद्रता ही बदले की प्रेरक होती है; श्रेष्ठात्मा किसी पर चोट करने को बुरा समझता है; इससे उसे फायदा होता है जो उसे व्याकुल करना चाहता था।

हे मनुष्य! तू बदला क्यों लेना चाहता है? प्रतिहिंसा करने में तेरा क्या उद्देश है? क्या तू समझता है कि इससे तेरे शत्रु को दुःख पहुँचेगा? याद रख कि इससे सबसे ज़ियादा तुझ ही को दुःख होता है।

बदला उस हृदय को खा जाता है जिसमें यह भरा रहता है; परन्तु वह मनुष्य सुखी रहता है जिससे बदला लेने का यत्न किया जाता है।

इससे जो दुःख होता है वह स्वाभाविक नहीं, इसलिए प्रकृति ने इसे तेरे लिए नहीं बनाया है; क्या पीड़ित को अधिक पीड़ा का प्रयोजन है? या

क्या उसे उस सन्ताप को ज़ियादा बढ़ाना चाहिए जो कि दूसरा उसे देता है ?

जो मनुष्य बदला लेने का विचार करता है वह मानो उस क्षति पर सन्तुष्ट नहीं जो उसे पहुँच चुकी है।

वह अपने मनस्ताप में उस दण्ड की वृद्धि करता है जो कि दूसरे को भोगना चाहिए था, और जिसे वह दुःख देना चाहता है वह प्रसन्न रहता है, उसके कष्ट में वृद्धि देख कर वह खुश होता है।

मन में बदले का ख़याल रखने से दुःख होता है, और बदला लेने की क्रिया भय से परिपूर्ण है, कुल्हाड़ा बहुत कम वहाँ पड़ता है जहाँ उसे मारने-वाले का सङ्कल्प हो; और देखो, चलानेवाले को इस बात की कुछ भी याद नहीं होती कि यह कहीं उचट कर मेरे ही पैरों पर न गिरे।

बदला लेनेवाला अपने शत्रु को दुःख देना . है, परन्तु प्रायः इससे उसका अपना ही

नाश हो जाता है; वह अपने शत्रु की एक आंख फोड़ने को सोचता है परन्तु उसकी अपनी दोनों आँखें फूट जाती है।

यदि वह अपने उद्देश्य में सफलमनोरथ न हो तो उसे शोक होता है, और यदि वह कृतकार्य हो जाय तो उसे पश्चात्ताप होता है।

न्याय के भय से उसकी आत्मा की शान्ति नष्ट हो जाती है, और उसको उस न्याय से छिपाने की चिन्ता से उसके मित्र की आत्मा अशान्त रहती है।

क्या तेरे शत्रु की मृत्यु से तेरी घृणा तृप्त हो सकती है? क्या उसे शान्तिधाम में पहुँचा देने से तेरी आत्मा को शान्ति मिल सकेगी?

यदि तू उसे अपराध के लिए दण्डित करना चाहता है तो उसे पराजित कर, और छोड़ दे, मृत्यु से वह तेरे प्राधान्य को स्वीकार नही करेगा और न तेरे कोप की शक्ति का अनुभव करेगा।

बदले में बदला लेनेवाले की जीत होनी चाहिए, और जिसने उसे दु:ख दिया है उसे उसकी

अप्रसन्नता के गुरुत्व का अनुभव होना चाहिए; उसे इसके लिए दुःख और अपने दुष्कर्म्म के लिए पश्चात्ताप होना चाहिए।

यह क्रोध से पैदा होनवाला बदले का भाव है, परन्तु जो तुझे सबसे बड़ा बनाती है वह बदले की उपेक्षा है।

भीरु पुरुष ही क्षति उठा कर शत्रु की हत्या करने का निश्चय करता है; परन्तु उसे यह भय बराबर बना रहता है कि यदि मेरा प्रहार ख़ाली गया और शत्रु जीवित रहा तो वह मुझसे बदला लिये बिना न रहेगा।

मृत्यु से झगड़ा समाप्त हो जाता है, परन्तु इससे खोई हुई कीर्ति दुबारा नहीं मिलती; हत्या दक्षता है वीरता नहीं; इसमें रक्षा तो है पर यश नहीं।

किसी अपराध का बदला लेने के समान कोई आसान, और इसे क्षमा करने के समान कोई यशस्कर कार्य नहीं।

सबसे बड़ी विजय जो मनुष्य लाभ कर सकता है वह अपनी इन्द्रियों का दमन करना है; जो मनुष्य दुःख को दुःख नहीं समझता वह दुःख देनेवाले से प्रत्यक्ष बदला लेता है।

जब तू बदला लेने की सोचता है तब एक प्रकार से तू यह स्वीकार करता है कि तूने दुःख अनुभव किया है; जब तू शिकायत करता है तब तू यह मानता है कि तुझे चोट लगी है; क्या तू अपने शत्रु के गर्व के साथ उसकी इस विजय को भी जोड़ देना चाहता है ?

जिस चोट का अनुभव ही नहीं होता उसे चोट नहीं कह सकते; फिर जो इसका तिरस्कार करता है वह इसका बदला कैसे ले सकता है ?

यदि तू चोट को सहारना अपने लिए अपमान समझता है, तो तेरी शक्ति मे और भी बहुत कुछ है; तू इसे जीत सकता है।

उत्तम कर्म्मों के कारण दूसरे को तेरा शत्रु

वनने से लज्जा आयगी । तेरी आत्मा की उच्चता उसे तुझे क्षति न पहुँचाने देगी ।

जितना वड़ा अपराध हो उसके क्षमा करने में मनुष्य की उतनी ही बड़ाई है; बदला लेने के लिए जितने प्रबल कारण होंगे, क्षमा करने में उतना ही ज़ियादा यश होगा ।

क्या तू अपने पक्ष में आप न्यायाध्यक्ष बनने का अधिकार रखता है ? आप ही वादी और आप ही निर्णेता बनना चाहता है ? अपराधी ठहराने के पहले देख ले कि क्या दूसरे भी तेरे निर्णय को न्यायसङ्गत कहते है ।

प्रतिहिंसक से सब डरते है इसलिए वे उससे घृणा करते है; परन्तु कृपालु का सब कोई आदर करता है । उसके कार्यों की सदा प्रशंसा होती है, और सारा संसार उसे प्रेम की दृष्टि से देखता है ।

———

चौथा प्रकरण।

क्रूरता, घृणा और ईर्ष्या।

बदला घृणा के योग्य है तो फिर क्रूरता कैसी है ? देखिए ! इसमें बदले के सभी दुर्गुण है परन्तु इसके लिए केवल क्रोध को भड़काने का बहाना मिलना चाहिए।

मनुष्य इसको अपनी प्रकृति का अंश नहीं स्वीकार करते; वे इसे अपने हृदयों में एक प्रवासी समझकर इससे लज्जित होते है। क्या वे इसे अमानुषी विकार नहीं कहते ?

फिर इसका जन्म कहां से हुआ ? किस मानुषी विकार से इसकी उत्पत्ति हुई ? भय इसका पिता और शङ्का इसकी माता है।

वीर पुरुष सामना करनेवाले शत्रु पर तलवार उठाता है, परन्तु उसके शस्त्र डाल देने पर वह शान्त हो जाता है।

जो चीज़ तुझसे डरती है उसे पांवतले रौंदना

यश का कार्य नहीं; मरे को मारना वीरता नहीं। धृष्ट को दबा और दीन पर दया कर, तभी तेरी सबसे बड़ी जीत होगी।

जिसके पास इस उद्देश की प्राप्ति के लिए सद्‌गुण नहीं; जिसके पास इस प्रकार यहाँ तक पहुँचने का शौर्य नहीं, देखिए, वह विजय का स्थान हत्या से और प्रभुत्व का स्थान रक्तपात से पूरा करता है।

जो सबसे डरता है वह सब पर चोट करता है; प्रजापीड़क राजा क्रूर क्यों होते हैं क्योंकि वे सदा भयभीत रहते है।

गली का डरपोक कुत्ता उस जन्तु की लाश को चीर फाड़ कर खा जाता है जिसकी सजीव अवस्था में वह उसकी ओर देखने का भी साहस न कर सकता था; परन्तु वीर शिकारी कुत्ता जो उस जन्तु को मारता है, मरने के बाद उसकी लाश को फाड़ नहीं डालता।

गृहविद्रोह में सबसे ज़ियादा रक्तपात होता

है, क्योंकि उसमें लड़नेवाले भीरु होते हैं। षड्यंत्र रचनेवाले हत्यारे हैं क्योंकि मृत्यु में निःशब्दता है; इन्हें शङ्का बनी रहती है कि कहीं भण्डा न फूट जाय।

तू अपने को घृणा की पहुँच से ऊपर रख जिससे तू क्रूर न बन जाय; तू अपने को ईर्ष्या के लक्ष्य से बाहर रख, जिससे तू निष्ठुर न हो जाय।

प्रत्येक मनुष्य को दो भिन्न भिन्न रीतियों से देखा जा सकता है, एक मे वह तुझे- बहुत ज़ियादा दुःख देनेवाला दीख पडता है, और दूसरी मे बहुत थोड़ा दुःख देनेवाला; उसे उस रीति से देख जिसमें वह बहुत थोड़ा दु ख देनेवाला मालूम होता है; फिर तू उसे कोई हानि नहीं पहुँचायगा।

कौन सी ऐसी वस्तु है जिससे मनुष्य कोई काम नहीं ले सकता? जो चीज़ हमें सबसे ज़ियादा दु.ख देती है उससे घृणा की अपेक्षा शिकायत ज़ियादा पैदा होती है। जिससे शिकायत हो उससे तो मनुष्य कभी मेल कर सकता है, परन्तु जिससे घृणा हो उसे वह मार कर मिटा देना चाहता है।

यदि तुझे एक लाभ उठाने में रोका गया है तो क्रोध से भड़क मत उठ, क्योंकि यदि तेरी बुद्धि नष्ट हो गई तो तुझे इससे भी बढ़ कर लाभ में हाथ धोने पड़ेंगे।

यदि तेरी कुरती छिन गई है तो क्या तू अपना कोट भी उतार फेंकेगा ?

यदि तू किसी सम्भ्रान्त मनुष्य के सम्मान, उपाधि और महत्ता को देख कर जलता है तो विचार कर कि ये चीजे उसे कहाँ से मिलीं; तलाश कर कि किन साधनों से उसने इतना सम्मान लाभ किया, फिर तेरी ईर्ष्या करुणा में परिवर्तित हो जायगी।

यदि वही ऐश्वर्य उसी मूल्य पर तुझे दिया जाता, तो निश्चय जान कि यदि तू बुद्धिमान् होता तो उसे लेने से इनकार कर देता।

उपाधियों का मूल्य खुशामद है, अधिकार और क्षमतावाले व्यक्ति के दास बनने से ही ये चीज़ें प्राप्त होती हैं।

क्या तू दूसरे की स्वतन्त्रता छीनने के लिए अपनी स्वतन्त्रता खो देना पसन्द करेगा ? क्या तू ऐसा करनेवाले से ईर्ष्या करता है ?

मनुष्य अपने से श्रेष्ठ पुरुषों से जो चीज़ ख़रीदता है उसके लिए उसे एक विशेष मूल्य देना होता है, और क्या वह मूल्य उस चीज़ के वास्तविक मूल्य से अधिक नहीं होता ? क्या तू संसार के रिवाजों को बिगाड़ना चाहता है ? क्या तू चीज़ और साथ ही उसका मूल्य भी लेना चाहता है ?

जिस चीज को तू लेना नहीं चाहता उससे तू ईर्ष्या नहीं कर सकता, इसलिए घृणा के इन कारणों—उपाधि और धनाढ्यता—का तिरस्कार कर, और क्रूरता के उत्पादक कारणों को अपने हृदय से निकाल डाल।

यदि तेरे पास सम्मान और यश है तो क्या तू ऐसी चीज़ से ईर्ष्या करेगा जो इनको खोकर मिलती है ? यदि तू पुण्यशीलता का वास्तविक मूल्य जानता है तो क्या तुझे उन लोगों पर दया न

आयगी जिन्होंने इसे देकर सांसारिक ऐश्वर्य ऐसी निकृष्ट वस्तु ली है ?

जब तू व्यथित हुए बिना दूसरों के मङ्गलाभास को सहारना सीख जायगा तो तू उनके प्रकृत आनन्द को बड़ी प्रसन्नता से सुनेगा।

पात्र को उत्तम वस्तुएँ पाते देख कर तू प्रसन्न होगा; क्योंकि धर्मात्मा मनुष्य धर्म्मात्माओं के ऐश्वर्य को देखकर प्रसन्न होते हैं।

जो मनुष्य दूसरों के सुख पर हर्ष मनाता है, वह अपने सुख को बढ़ाता है।

पाँचवाँ प्रकरण।

खिन्नता।

सानन्द पुरुष की आत्मा दुःखी मनुष्य को भी हँसा देती है; परन्तु खिन्न पुरुष का विषाद हर्ष उज्ज्वलता को भी नष्ट कर देता है।

विषाद का स्रोत आत्मा की निर्बलता है; पुरुषार्थ के अभाव से उसे शक्ति मिलती है; उससे युद्ध करने के लिए तू कमर कस और वह तेरे आक्रमण के पहले ही रणक्षेत्र से भाग जायगा।

खिन्नता तेरी जाति की शत्रु है इसलिए उसे अपने हृदय से निकाल दे; वह तेरे जीवन की मिठाइयों में विष मिला देती है इसलिए उसे अपने घर में मत घुसने दे।

वह एक तृण की हानि को तेरे सकल ऐश्वर्य के विनाश तक पहुँचा देती है; तेरी आत्मा को तुच्छ बातों से व्याकुल करके वह तेरा ध्यान प्रयोजनीय बातों की ओर नहीं जाने देती; देख, जो कुछ वह तुझे बताती है वह एक प्रकार से उसके पूरा होने की भविष्यद्वाणी करती है।

वह तेरे सद्गुणों पर आलस्य का परदा डाल देती है; वह उन्हें उन लोगों से छिपा लेती है जो उन्हे देख कर तेरा सम्मान करेंगे; वह उन्हें उलझा कर

दवा देती है जिससे उन पर ज़ोर देना तेरे लिए परमावश्यक हो जाता है।

देख, वह तुझे अनिष्ट से सताती है; वह तेरे हाथों को बाँध देती है जब कि वे तुझे उसके बोझ से मुक्त करना चाहते हैं।

यदि तू नीचता, भीरुता और अन्याय को अपने हृदय से दूर रखना चाहता है तो खिन्नता और उदासी को अपने पास मत फटकने दे।

इसको धर्मानुराग का रूप मत धारण करने दे, और न बुद्धिमत्ता के दिखलाने से तू इसके धोखे में आ। धर्म्म तेरे स्रष्टा की पूजा करता है, तू इसे खिन्नता से उदास मत होने दे; बुद्धिमत्ता तुझे आनन्दित करती है, इसलिए तू जान कि वह शोक से अपरिचित है।

दुःख और विपत्ति के सिवा मनुष्य कब शोकाकुल होता है? जब तक हर्ष के कारण उससे छीन न लिये जायँ, उसका हृदय आनन्द को क्यों छोड़ दे?

यह दुःख के निमित्त ही दुःखित होना नहीं?

जो दशा उस शोककारक की है जो इसलिए शोक करता है कि उसे इसके लिए वेतन मिलता है, जो इसलिए रोता है कि उसे रोने के लिए पैसे मिलते है, वही दशा उस मनुष्य की है जो अपने हृदय को खिन्न करता है, इसलिए नहीं कि उसे कोई दु.ख है प्रत्युत इसलिए कि वह उदास है।

घटना शोक को पैदा नहीं करती; क्योकि देखो, इसी से दूसरे को हर्ष होता है।

लोगों से पूछ देखो, कि क्या उनके शोक करने से बिगड़ा हुआ कार्य बन जाता है और वे सब मानेंगे कि खेद करना मूर्खता है; वे उसकी प्रशंसा करते है जो अपने कष्टों को धैर्य्य से सहन करता है, जो वीरता से विपत्तियों का सामना करता है। प्रशंसा करने के बाद उसका अनुकरण भी करना चाहिए।

विषाद प्रकृति का विरोधी है क्योंकि यह उसकी गतियों मे बाधा देता है, जिन चीज़ो को प्रकृति ने रुचिर बनाया है उन्हे यह अरुचिर बना देता है।

जिस प्रकार पीपल का पेड़ आँधी से भूतल-

शायी होजाता है और फिर उठ नहीं सकता, उसी प्रकार मानव-हृदय खेद के बोझ से दब कर फिर उठने योग्य नहीं रहता।

जिस प्रकार वर्षा से पर्वतों का हिम पिघल जाता है उसी प्रकार रोने से गालों का सौन्दर्य्य नष्ट हो जाता है; दोनों में से कोई भी फिर अपने स्थान पर नहीं आता।

जिस प्रकार सिरके में मोती घुल जाता है, उसी प्रकार हे मनुष्य! सुख को शोक निगल जाता है।

खिन्नता को सार्वजनिक बाज़ारों में देखो; जनता के मनोरञ्जन के स्थानों में उस पर दृष्टि डालो; क्या कोई उस पर ध्यान देता है? क्या वह हर एक से दूर नहीं भागती? और क्या हर एक उसके सामने से दूर नहीं भागता?

देखो, उसका सिर उस फूल की तरह नीचे झुका हुआ है जिसकी जड़ काट दी गई हो; देखो किस प्रकार उसकी आँखें पृथ्वी पर गड़ी हुई हैं,

और 'अश्रुधारा बहाने के अतिरिक्त कुछ और काम नहीं करतीं ।

क्या उसके मुँह में बात है ? क्या उसके हृदय में समाज से प्रेम है ? क्या उसकी आत्मा में बुद्धि है ? उससे इसका कारण पूछो, वह बता नहीं सकती; उससे अवसर पूछो तो कोई न मिलेगा ।

फिर भी उसकी शक्ति उसका साथ नहीं देती, और अन्त को उसे श्मशान भूमि में पहुँचाया जाता है, और कोई नहीं पूछता "उसे क्या हुआ ?"

क्या तुझमें बुद्धि है और तू इसे नहीं देखता ? क्या तुझमें धर्मानुराग है और तू अपनी भूल को नहीं जानता ?

परमेश्वर की दया से तेरा जन्म हुआ है; यदि उसका सङ्कल्प तुझे सुखी रखने का न होता तो उसकी उपकारशीलता तुझे कभी भी उत्पन्न न करती; फिर तू उसकी विभूति से भागने का साहस कैसे कर सकता है ?

जब निर्दोषिता में तू सबसे अधिक सुखी होता

है तब तू उसकी सबसे अधिक पूजा करता है; उसके विरुद्ध कुड़मुड़ाने के सिवा तेरा असन्तोष और है क्या ?

क्या उसने सभी वस्तुओं को परिवर्तनशील नही बनाया ! फिर तू उनके परिवर्तन पर रोने का दुःसाहस करता है ।

यदि हमे प्रकृति के नियम का ज्ञान हो तो फिर हम शिकायत किस लिए करें ? यदि हमे इसका ज्ञान न हो तो इसके लिए हम अपनी उस चीज़ से अनभिज्ञता के सिवा और किसको दोष दे सकते है जिसका प्रमाण कि एक एक क्षण दे रहा है ?

याद रख कि जगत् के नियमों का निर्माता तू नहीं; तेरा काम यह है कि जिस रूप मे वे है उसी रूप मे तू उनका पालन करे; यदि वे तुझे दुःख देते है तो तेरा रोना पीटना इस दुःख को और बढ़ा देगा ।

चिकनी चुपड़ी बातों से धोखा मत खा, और

न यह समझ कि शोक करने में विपत्तियाँ दूर हो जाती है; यह औषध के रूप में विष है, यह देखने को तो तेरी छाती से बाण निकालता है पर वास्तव में यह उसे हृदय में गहरा गाड़ता है।

खिन्नता तुझे तेरे मित्रों से अलग करती है, क्या वह यह नहीं कहती कि तू संभाषण के योग्य नहीं ? यद्यपि यह तुझे एकान्त में ले जा बैठाती है पर क्या यह साथ ही यह विघोषित नहीं करती कि मैं अपने आप से लज्जित हूँ ?

दुर्भाग्य के बाणों का चोट खाये बिना, सामना करना तेरी धातु में नहीं, न बुद्धि तुझसे इसकी आशा करती है। तेरा कर्तव्य तो विपत्ति को पुरुषोचित रीति से सहन करना है, परन्तु पहले तुझे इसका अनुभव भी वीर पुरुष की तरह ही करना चाहिए।

तेरे नेत्रों से अश्रु चाहे गिरने लगें परन्तु तेरे हृदय से पुण्य दूर न हो; केवल इस बात का ख़याल

रख कि अश्रुपात अकारण न हो और बहुत जियादा न हो।

अमङ्गल के गुरुत्व की जाँच इसके लिए गिराये हुए आँसुओं की संख्या से नहीं हो सकती; सबसे बड़े शोक इन प्रमाणों से ऊपर होते हैं जिस प्रकार कि सबसे बड़े हर्ष वाणी द्वारा प्रकट नहीं किये जा सकते।

शोक के सदृश आत्मा को निर्बल करनेवाली और कौन सी चीज़ है? रोट की तरह इसको दबानेवाली और क्या वस्तु है? क्या शोकार्त मनुष्य साहस के श्रेष्ठ कार्य करने को उद्यत है? क्या वह धर्म्म-युद्ध का सिपाही बनने को तैयार है?

तू अपने को ऐसे कष्टों में मत फँसा जिनसे कोई लाभ नहीं होता, और न पुण्य को पाप पर न्योछावर कर।

चौथी पुस्तक ।

मनुष्य अपने समाज मे किस प्रकार आदर पा सकता है ।

पहला प्रकरण ।

शिष्टता और यश ।

शिष्टता का निवास आत्मा में है; धर्म्मशीलता के सिवा सच्चा यश और कहीं नहीं ।

भूपालों की कृपा-दृष्टि दुराचारो से प्राप्त की जा सकती है; पद और उपाधियां धन से ख़रीदी जा सकती है; परन्तु ये सच्चा यश नहीं ।

जो सच्ची कीर्ति के लिए पाप करता है उसको वे पाप उच्च नहीं करते, न स्वर्ण ही मनुष्यों को श्रेष्ठ बना सकता है ।

जब उपाधियां सद्‌गुणों का पुरस्कार होती है; जब देश-सेवक को उच्च स्थान दिया जाता है; तब सम्मान देनेवाले और सम्मान पानेवाले दोनों

का यश होता है, और संसार को इससे लाभ पहुँचता है।

क्या तू मनुष्यों के लिए कुछ अज्ञात वस्तु पैदा करना चाहता है? क्या तू चाहता है कि वे कहें "इसका क्या कारण है?"

जब वीर पुरुष के सद्गुण उसके वंशों में जावें तब समझो कि उसकी उपाधियाँ भी उनके साथ हैं, परन्तु जब अनधिकारी को उपाधि मिल जाती है तब देखो, क्या लोग उसे पतित नहीं कहते?

परंपरा से प्राप्त कीर्ति और यश सर्वश्रेष्ठ समझे जाते हैं, परन्तु बुद्धि उसी की प्रशंसा करती है जिसने उनको प्राप्त किया था।

जो गुणहीन मनुष्य अपने पूर्वजों के सुकार्यों के कारण अपनी बड़ाई चाहता है वह उस चोर के सदृश है जो देवालय में जाकर शरण लेता है।

चक्षुहीन को इस बात से क्या लाभ कि उसके माता-पिता सचक्षु थे? गूँगे को अपने दादा के

त्रागीश होने से क्या फ़ायदा ? इसी प्रकार दुष्टो का इस बात से क्या यश कि उनके पूर्वज श्रेष्ठ थे ?

जिसका मन पुण्य की ओर झुका हुआ है वह बड़ा है; राज्य की उपाधियों के विना भी वह सर्व-साधारण से उच्च है।

वह अपने आप सम्मान प्राप्त कर लेता है, जब कि दूसरे लोग इसे राज्य से पाते है; और क्या वह उनसे नहीं कहता है, "वे पुरुष ऐसे ही थे जिनकी सन्तान होने का तुम अभिमान करते हो।"

जिस प्रकार किसी वस्तु से उसकी छाया दूर नहीं हो सकती वैसे ही धर्म्मात्मा से सच्चा यश दूर नहीं रह सकता।

यह मत कहो कि यश वीरता की सन्तान है, और न यह समझ कि जान को जोखिम में डालने से ही यह मिल सकता है; यह किसी कार्य से नहीं, प्रत्युत उसके करने की रीति से प्राप्त होता है।

सभी लोग राज्यरूपी नौका के कर्णधार नहीं बन सकते, न सब सेनाओ के सेनापति बनाये जा

सकते हैं, जो काम तेरे सिपुर्द किया गया है तू उसे भलीभाँति पूरा कर, फिर प्रशंसा तेरे साथ रहेगी।

यह मत कह कि नाम पाने के लिए कठिनताओं पर विजय पाना, सङ्कटों का सामना करना, और भारी परिश्रम करना आवश्यक है. क्या सती नारी की प्रशंसा नहीं होती; क्या निष्कपट मनुष्य यश का अधिकारी नहीं होता ?

ख्याति की चाह बड़ी प्रबल है; यश की कामना बड़ी प्रचण्ड है: जिसने हमें ये चीज़ें दी हैं उसने बड़े बड़े प्रयोजनों के लिए दी हैं।

जब सार्वजनिक कल्याण के लिए साहसिक कार्यों की आवश्यकता हो, जब देश-हित के लिए जीवनों की आहुति देना ज़रूरी हो तब यशस्तृष्णा के सिवा पुण्य की प्रेरक और कौनसी चीज़ हो सकती है ?

श्रेष्ठ पुरुष को यश लाभ करके प्रसन्नता नहीं होती, प्रत्युत उस यश का अधिकारी बनने से उसे आनन्द आता है।

क्या लोगों को यह कहते सुनना अच्छा है कि "इस मनुष्य का स्मृति-चिह्न क्यों नहीं बनाया गया ?" या यह कहते कि "इसका स्मारक क्यों बनाया गया है ?"

यशस्काम व्यक्ति जनसमूह मे सदा आगे रहता है, वह आगे बढता जाता है और अपने पीछे नहीं देखता, सहस्रों मनुष्यों को अपने पीछे छोड़ा देखकर उसे उतना हर्ष नही होता जितना कि एक मनुष्य को अपने आगे देखकर दुःख होता है।

यश की कामना प्रत्येक मनुष्य में है, परन्तु वह सबमें प्रकट नहीं होती; कइयो में तो यह भय से और कइयों मे विनय से दबी रहती है।

यह कामना आत्मा का आन्तरिक परिच्छद है; आत्मा शरीर को धारण करते समय सबसे पहले इसे पहनती, और शरीर से जुदा होने पर सब से पीछे इसे छोड़ती है।

जब इससे उचित काम लिया जाय तब यह तेरी

प्रकृति के लिए यश है, परन्तु इनके दुरुपयोग से होता अपयश और विनाश होता है।

विश्वासघातक की छाती में यशस्तृष्णा छिपी रहती है, दम्भ अपना मुख इसकी चादर में छिपा रखता है, और छल इसे चिकने-चुपड़े शब्दों से सुसज्जित करता है परन्तु अन्त में लोग इसका वास्तविक स्वरूप देख लेते हैं।

सरदी से ऐंठ जाने पर भी साँप का डङ्क वैसा ही बना रहता है, शीत से भुजङ्ग का मुँह बन्द हो जाने पर उसका दाँत नहीं टूट जाता, तू उसकी दशा पर दया कर और वह तुझे अपना भाव दिखला देगा, अपनी छाती के साथ लगाकर उसे गरमी पहुँचा तो इसका बदला वह तुझे मृत्यु देगा।

वास्तव में जो धर्मशील है वह धर्म से धर्म के लिए ही प्रेम करता है; वह उस प्रशंसा का तिरस्कार करता है जिसकी कि प्राप्ति की इच्छा यशस्कामी करता है।

यदि पुण्यशील मनुष्य दूसरे की प्रशंसा के बिना

सुखी न हो सकता तो उसकी कैसी दीन अवस्था होती। वह इतना उच्च होता है कि किसी प्रकार के पुरस्कार की कामना नहीं करता, और यदि करता भी है तो उससे अधिक नहीं जितना कि उसे दिया जा सकता है।

जितना ऊँचा सूर्य चढ़ता है उतनी ही कम उसकी छाया होती है, इसी प्रकार जितनी बड़ी पुण्यशीलता होगी उतना ही कम वह प्रशंसा का लोभ करेगी; परंतु वह यश से वञ्चित नहीं रह सकती।

कीर्ति अपना पीछा करनेवाले के आगे आगे छाया की तरह भागती है; परन्तु जो इससे दूर भागता है यह उसके पीछे भागती है; यदि तू इसका अधिकारी नहीं तो इसे कभी न प्राप्त कर सकेगा; यदि तू इसका अधिकारी है तो फिर तू चाहे अपने आपको कहीं छिपा भी ले, यह तेरा साथ कभी न छोड़ेगी।

उचित और श्रेष्ठ कार्य कर, फिर तेरे अन्तःकरण की प्रशंसा तुझे उन करोड़ों नर-नारियों की

करतल-ध्वनि से अधिक सुखदायक होगी जिनको कि इस बात का यथार्थ ज्ञान नहीं कि न प्रशंसा का सच्चा अधिकारी है।

दूसरा प्रकरण।

ज्ञान और विज्ञान।

मानव-मन का सर्वश्रेष्ठ कार्य यह है कि वह अपने स्रष्टा के कार्यों का अध्ययन करे।

जिसे प्रकृति की शिक्षा में आनन्द आता है उसे प्रत्येक वस्तु में उससे परमेश्वर का प्रमाण मिलता है परमेश्वर को प्रमाणित करनेवाली प्रत्येक चीज उसके अन्दर पूजा का भाव उत्पन्न करती है।

उसका मन प्रतिक्षण आकाश की ओर उड़ता है, उसका जीवन एक निरन्तर भक्ति का जीवन है।

वह अपनी दृष्टि बादलों की ओर डालता है, तो क्या उसे आकाश अद्भुत पदार्थों से भरा नहीं दीखता ? वह पृथ्वी की ओर देखता है तो क्या

कीड़े उसे यह कहते नहीं सुनाई देते कि सर्वशक्तिमान् के सिवा उन्हें और कोई वना न सकता था ?

नक्षत्र घूमते है; सूर्य्य अपने स्थान पर स्थित है; पुच्छल तारे तरल वायु में दौड़ते और फिर अपने नियत मार्ग पर आजाते है, हे मनुष्य! परमेश्वर के सिवा और कौन इन वस्तुओ को बना सकता था ? अनन्त ज्ञान के सिवा और कौन उनके नियम बना सकता था ?

देखो उनकी शोभा कैसी भीषण है! फिर क्या उनका ह्रास नहीं होता, देखो! उनकी गति कैसी शीघ्र है! फिर भी वे एक दूसरे से नहीं टकराते।

पृथ्वी-तल पर दृष्टिपात करो, और उसकी उपज को देखो, उसके पेट की परीक्षा करो और देखो उसमें क्या कुछ है; क्या सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् ने इन सब वस्तुओ को पैदा नहीं किया ?

घास को उगने की कौन आज्ञा देता है ? उचित समयों पर इसे कोन जल देता है? देखो बैल उसमें

चरता है, घोड़ा और भेड़ उसे खाते हैं; किसने उनके लिए इसे पैदा किया ?

तेरे बोये हुए अन्न को कौन बढ़ाता है ? एक दाने के स्थान में सहस्र दाने तुझे कौन देता है ?

समय पर अङ्गूर और आम को तेरे लिए कौन पकाता है ? क्या तू इसका कारण नहीं जानता ?

क्या क्षुद्र से क्षुद्र मक्खी अपने आप पैदा हो सकती है ? यदि तू इसे बना सकता तो क्या तू परमेश्वर से कुछ कम होता ?

पशु अनुभव करते हैं कि हम जीते हैं पर वे इस पर आश्चर्य नहीं करते; वे अपने जीवन से प्रसन्न हैं पर वे नहीं जानते कि यह समाप्त हो जायगा; प्रत्येक अपना नियत जीवन निरन्तर व्यतीत करता है, एक सहस्र पीढ़ियों में भी एक वर्ग का नाश नहीं होता।

तू जो व्यष्टि को समष्टि के सदृश अद्भुत देखता है 'तेरी आँखों के लिए व्यष्टि में स्रष्टा की महिमा

को ढूँढने और तेरे मन के लिए इसके चमत्कारों को परखने से उत्तमतर और क्या काम हो सकता है ?

व्यष्टि के निर्माण में शक्ति और दया प्रकट है; इसके परिकल्पन में न्याय और कृपा झलक रही है; सभी अपने अपने स्थानों में सुखी हैं, एक दूसरे से ईर्ष्या नहीं करते ।

इसके मुकाबले में पुस्तकों का अध्ययन किस काम का है ? प्रकृति के अध्ययन के सिवा और किस विद्या के अध्ययन से ज्ञान की प्राप्ति होती है ?

रचना की प्रशंसा करने के बाद इसके उपयोग के विषय में पूछ; क्योंकि याद रख पृथ्वी कोई चीज़ ऐसी पैदा नहीं करती जो तेरे काम की न हो, क्या आहार, वस्त्र, और तेरे रोगों के लिए ओषधियाँ सब इसी एक स्रोत से नहीं पैदा होतीं ?

इसलिए इसको जाननेवाले के सिवा और कौन बुद्धिमान है ? इस पर विचार करनेवाले के सिवा और किसमें समझ है ? शेष बातों में यह ख़याल रख कि जो विद्या सबसे अधिक उपयोगी हो,

ईश्वर की भक्ति और मनुष्यों का उपकार क्या ये तेरे परम कर्तव्य नहीं ?

भक्ति तुझे उसके कार्यों का अध्ययन सिखायगी, और उपकार तुझे तेरी परतन्त्रता का बोध करायगा ।

पाँचवीं पुस्तक ।

नैसर्गिक दुर्घटनाएँ ।

पहला प्रकरण ।

समृद्धि और विपत्ति ।

समृद्धि में हद से ज़ियादा मत फूल; और न विपत्ति में अपनी आत्मा को विपण्ण होने दे।

समृद्धि की मुस्कराहटें स्थिर नहीं; इसलिए तू उन पर भरोसा मत कर; उसकी घुड़कियाँ सदा नहीं बनी रहतीं, इसलिए आशा से धैर्य्य का पाठ पढ़।

विपत्ति को भलीभाँति सहन करना कठिन है, परन्तु समृद्धि में मिताचारी रहना सबसे बड़ी बुद्धिमत्ता है।

सौभाग्य और दुर्भाग्य ऐसी कसौटियाँ है जिनसे तू अपनी स्थिरता की परीक्षा कर सकता है, इनके सिवा और कोई ऐसी चीज़ नहीं जिससे

तेरी आत्मा की शक्तियों का तुझे पता लग सके, इसलिए जब वे तुझ पर आयें तब तू सावधान रह।

देखो समृद्धि कैसे मधुर शब्दो मे तेरी ख़ुशामद करती है! कैसी अज्ञात रीति से वह तेरी शक्ति को तुझसे अपहरण कर लेती है!

यद्यपि तू दुर्भाग्य मे स्थिर रहा हो, यद्यपि दुःख मे तू अजेय रहा हो, फिर भी वह तुझे जीत लेती है, तू नहीं जानता कि तेरी शक्ति फिर लौट कर न आयगी पर इसकी आवश्यकता तुझे फिर ज़रूर होगी।

दुःख को देखकर हमारे शत्रुओं के हृदय मे भी दया का सञ्चार होता है; सफलता और सुख को देखकर हमारे मित्र भी ईर्ष्या करने लगते है।

विपत्ति में भलाई करने का बीज है, यह वीरता और निर्भयता को पैदा करती है; प्रचुर धन रखने पर कौन मनुष्य अधिक के लिए अपने जीवन को

सङ्कट में डालेगा ? सुख मे पड़ा हुआ कौन मनुष्य अपने जीवन को जोखिम मे डालेगा ?

सङ्कुन धर्म्मात्मा सभी अवस्थाओं मे धर्म्म ही करता है, परन्तु जनता उसके परिणामों को उसी समय देखती है जब घटनायें उसके साथ मिलती है।

विपत्ति में मनुष्य अपने आपको अकेला देखता है, उसे मालूम होता है कि मेरी सारी आशाओं का केन्द्र मेरे ही अन्दर है, वह अपनी आत्मा को उत्तेजित करता है, वह अपनी कठिनताओं का सामना करता है, और वे उसके सामने दब जाती है।

समृद्धि में वह अपने आपको सुरक्षित समझता है, वह समझता है कि मेरे मित्र सभी मुझसे प्रेम करते हैं, वह असावधान और शिथिल हो जाता है, वह आनेवाले सङ्कट को नहीं देखता; वह दूसरो पर भरोसा करता है, और अन्त में वे उसे धोखा देते है।

विपत्ति में प्रत्येक मनुष्य अपनी आत्मा को

उपदेश दे सकता है, परन्तु समृद्धि सचाई को भी अन्धा कर देती है ।

सन्तोष पैदा करनेवाला शोक उस हर्ष से अच्छा है जो मनुष्य को कष्ट सहारने के अयोग्य बना देता है, और बाद को उसे सङ्कट मे डाल देता है ।

हमारी सभी चरमसीमाओं पर हमारे विकार हमे दबा लेते है; मिताचार बुद्धिमत्ता का परिणाम है ।

अपनी सभी बातो में निष्कपट हो; सभी परिवर्तनों मे सन्तुष्ट रह; इस प्रकार तू प्रत्येक व्यापार से लाभ उठा सकेगा, इससे तेरे साथ होनेवाली प्रत्येक घटना तेरे लिए प्रशंसा का स्रोत बन जायगी ।

बुद्धिमान् प्रत्येक चीज़ से फ़ायदा उठाता है, विपत्ति और समृद्धि मे उसका मुखमण्डल एक समान रहता है; वह पुण्य का शासक और पाप का विजेता रहता है; वह सबमें अचल रहता है ।

समृद्धि पर गर्व और विपत्ति पर मुंह मत फर, तथा अपने को सङ्कटों में मत डाल, और न भीरु बन कर उनसे दूर भाग; जो वस्तु तेरे पास नहीं रहती उसका तिरस्कार कर।

विपत्ति के समय आशा को हाथ से मत जाने दे, और न समृद्धि में दूरदर्शिता से मुख मोड़।

जो मनुष्य आरम्भ में ही परिणाम से निराश हो जाता है वह कभी कृतकार्य नहीं होता, जो अपने सामने का गढ़ा नहीं देखता वह उसमें गिर कर नष्ट हो जाता है।

जो समृद्धि को अपना महल समझता है; जो उससे कहता है कि "मैं तुझ पर अपने सुख का भार खड़ा करूँगा"; वह अपनी नौका का लङ्गर रेत पर डालता है, जो लहर के लौटने से बह जाता है।

नदी जिस प्रकार पर्वत से निकल कर रास्ते मे पडनेवाले खेतों को चूमती हुई सागर में जा गिरती है, और रास्ते में कहीं नहीं ठहरती, उसी प्रकार

भाग्य मनुष्यों के पास जाता है, उसकी गति अवि-
रत है. वह कहीं नहीं ठहरता, वह पवन के सदृश
अस्थिर है। फिर तू उसे अपने पास कैसे रख सकता
है? उसका स्वागत करते समय वह तुझे सुख देता
है; परन्तु ज्योंही तू उसका धन्यवाद करने के लिए
मुड़ता है वह किसी दूसरे के पास चला जाता है।

दूसरा प्रकरण।

दुःख और रोग।

शारीरिक रोग का आत्मा पर भी असर होता
है; एक के रोगी होते दूसरा स्वस्थ नहीं रह सकता।

पीड़ा का सब अमङ्गलों से बढ़ कर अनुभव होता
है; प्रकृति के पास भी इसके बहुत थोडे इलाज है।

जब तेरी स्थिरता गिर जाय, तब बुद्धि से काम
ले; जब तेरा धैर्य तुझे छोड़ जाय तब आशा को
बुला।

दुःख झेलना तेरे लिए एक स्वाभाविक काम

है; क्या तू चाहता है कि कोई लगातार कर्म दुःख से तेरी रक्षा करे ? क्या तू इस कारण घुल घुल कर मर जायगा कि दुःख का तेरे साथ स्वाभाविक सम्बन्ध है ? देखो। यह तो सबके लिए समान है।

तेरे जन्म के साथ जिसका सम्बन्ध है उससे मुक्त होने की आशा करना अन्याय है, अपनी अवस्था के नियमों के सामने सविनय सिर झुका।

क्या तू ऋतुओं से यह कहना चाहता है कि "मत गुजरो, मैं बूढ़ा हो जाऊँगा" ? जिससे तू बच नहीं सकता क्या उसे अच्छी तरह सहन करना अच्छा नहीं ?

देर तक रहनेवाली पीड़ा मध्यम होती है, इसलिए उसकी शिकायत करने से लज्जित हो, प्रचण्ड पीड़ा अल्पकाल तक रहती है; तू इसका अन्त देख लेता है।

तेरा शरीर तेरी आत्मा के अधीन रक्खा गया है, जब तू आत्मा को उसके दुःखों के लिए सताता है तब तू शरीर को उससे अच्छा समझता है।

जैसे काँटे से वस्त्र फट जाने पर बुद्धिमान् दुःखित
हीं होता, उसी प्रकार रोगी आत्मा को शारीरिक
.ख के कारण दु.खित नहीं करता ।

तीसरा प्रकरण ।

मृत्यु ।

जैसे धातु की उत्पत्ति रसज्ञ के कार्य को प्रमा-
ात करती है, उसी प्रकार मृत्यु हमारे जीवनों की
सौटी है, यह एक परीक्षा है जिसके द्वारा हमारे
र्मों की जांच होती है ।

यदि तू किसी जीवन की जांच करना चाहता
तो उसकी अवधि की परीक्षा कर; जहाँ दम्भ का
भाव है वहाँ सत्य का प्रकाश होता है ।

जो अच्छी तरह मरना जानता है उसने अपना
ीवन बुरी तरह व्यतीत नहीं किया, जिसने जीवन
ा अन्तिम भाग अच्छे काम में लगाया है उसने
सका शेष भाग भी व्यर्थ नष्ट न किया होगा ।

उसका जन्म व्यर्थ नहीं हुआ जिसकी मृत्यु जैसे चाहिए वैसे होती है; जो मनुष्य आनन्द से मरता है उसका जीवन निष्फल नहीं गया।

जो मनुष्य यह समझता है कि मुझे एक दिन मरना है वह जीवन में सन्तुष्ट रहता है; जो मृत्यु को भूलने का यत्न करता है उसे किसी चीज़ से भी सुख नहीं मिलता, वह अपने हर्ष को एक रत्न समझता है और इसके छिन जाने का भय उसे प्रतिक्षण लगा रहता है।

यदि तू श्रेष्ठ रीति से मरना चाहता है तो अपने दुर्गुणों को अपनी मृत्यु से पहले मार डाल। वह पुरुष धन्य है जो अपनी मृत्यु से पहले अपने व्यापारों को समाप्त कर लेता है; जिसके पास काल के आ पहुँचने पर मरने के सिवा और कोई काम नहीं होता, जो कार्याभाव से मृत्यु में विलम्ब की कामना नहीं करता।

मृत्यु से मत भाग, इसलिए कि यह निर्बलता है; इससे मत डर, क्योंकि तू नहीं जानता कि यह

ा है; इसके विषय में तू केवल इतना ही जानता
कि इससे तेरे सकल दुःखों की समाप्ति हो
ाती है।

मत समझ कि जितना लम्बा जीवन होता है
ना ही वह सुखमय होता है; जो जीवन सबसे
च्छे कार्यों में व्यतीत होता है वही सबसे जियादा
म्माननीय और प्रशंसनीय होता है, मनुष्य मृत्यु के
श्चात उत्तम जीवन के लाभों में आनन्दित
ाता है।

यही मानव-जीवन का पूर्ण विधान है।

॥ समाप्त ॥